दृष्टि The Vision

संघ लोक सेवा आयोग (UPSC)

दर्शनशास्त्र (वैकल्पिक विषय)

पाश्चात्य एवं समकालीन दर्शन

दृष्टि The Vision

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष : 011-47532596, 8750187501
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web : www.drishtiias.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिए निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

विषय सूची (Contents)

1.	पाश्चात्य दर्शन का परिचय	5-6
2.	प्लेटो-अरस्तू; प्लेटो	7-20
3.	प्लेटो-अरस्तू; अरस्तू	21-32
4.	तर्कबुद्धिवाद; डेकार्ट/देकार्त	33-43
5.	तर्कबुद्धिवाद; स्पिनोज़ा	44-53
6.	तर्कबुद्धिवाद; लाइबनित्ज़	54-63
7.	इंद्रियानुभववाद; लॉक	64-78
8.	इंद्रियानुभववाद; बर्कले	79-84
9.	इंद्रियानुभववाद; ह्यूम	85-97
10.	कांट	98-115
11.	हीगेल	116-122
12.	जी.ई. मूर	123-129
13.	रसेल	130-135
14.	पूर्ववर्ती विट्गेंस्टीन	136-139
15.	तार्किक परमाणुवाद/अणुवाद	140-144
16.	तार्किक भाववाद/तार्किक प्रत्यक्षवाद	145-159
17.	उत्तरवर्ती विट्गेंस्टीन	160-166
18.	संवृत्तिशास्त्र; हुसर्ल	167-173
19.	अस्तित्त्ववाद	174-194

Copyright– Drishti The Vision Foundation

20. क्वाइन 195–196

21. स्ट्रासन 197–202

22. पाश्चात्य दर्शन में जगत संबधी विचार 203–208

Copyright– Drishti The Vision Foundation

पाश्चात्य दर्शन का परिचय *(Introduction of Western Philosophy)*

पाश्चात्य दर्शन का जन्म मुख्यत: ग्रीस से माना जाता है। ग्रीस दार्शनिकों ने जड़-जगत् का विवेचन किया तथा उसके पश्चात् आत्मा का विश्लेषण किया। अंतत: जड़ तथा आत्मा के समन्वयन का प्रयास किया गया। ग्रीस दर्शन का महत्त्व इस बात से इंगित होता है कि इसके बिना पाश्चात्य दर्शन को अपूर्ण ही कहा जाएगा। सर्वप्रथम वास्तविक तौर पर जिस दार्शनिक ने दर्शन के स्पष्ट सिद्धांत तथा विचार प्रकट किये उसका नाम प्लेटो है। प्लेटो के पश्चात् उनका शिष्य अरस्तु है जिसने दर्शनशास्त्र को आदर्शवाद से निकालकर व्यवहारिकता प्रदान करने की कोशिश की और वह इसमें सफल भी रहा। इसके पश्चात् तर्कबुद्धिवाद, अनुभववाद, प्रत्ययवाद या अस्तित्ववाद जैसे सिद्धांतों के माध्यमों से विभिन्न महान दार्शनिकों ने पाश्चात्य दर्शन को परिस्कृत किया।

पाश्चात्य जगत् में दर्शन को 'फिलॉसफी' (Philosophy) के नाम से जाना जाता है। पाश्चात्य शब्द 'फिलॉसफी' दो शब्दों के योग से बना है अर्थात् Philos+Sopia, 'Sophia' शब्द का अर्थ है- बुद्धि। इसलिये 'फिलॉसफी' (Philosophy) का शाब्दिक अर्थ है- बुद्धि-प्रेम या बुद्धि-अनुराग। इस प्रकार पाश्चात्य दर्शन या दार्शनिकों का उद्देश्य प्रज्ञावान या बुद्धिवान व्यक्ति बनाना/बनना है। पाश्चात्य दर्शन की प्रमुख विशेषता रही है कि इसमें ज्ञान पर अत्यधिक बल प्रदान किया गया।

भारतीय संदर्भ में दर्शन का उद्देश्य पाश्चात्य दर्शन के उद्देश्य से भिन्न है। भारत में फिलॉसफी को 'दर्शन' कहा जाता है। 'दर्शन' शब्द 'दृश्' धातु से बना है जिसका अर्थ है 'देखना' या 'जिसके द्वारा देखा जाए। दर्शन विद्या के माध्यम से 'तत्त्वों' का साक्षात्कार करने पर बल दिया जाता है। भारतीय दार्शनिकों का बल तत्त्व के साक्षात्कार के साथ ही तत्त्व की अनुभूति प्राप्त करने पर भी रहा है। इसलिये भारतीय दार्शनिक कभी-कभी एक तपस्वी, खोजी या साधक के रूप में दिखाई देता है। जबकि पाश्चात्य दर्शन को भाषा-सुधार तथा प्रत्ययों का स्पष्टीकरण कहा जाता है।

ज्ञानमीमांसा *(Epistemology)*

दर्शन के मुख्यत: दो अंग माने जाते हैं-

(1) ज्ञानमीमांसा तथा (2) तत्त्वमीमांसा। समसामयिक दार्शनिकों के अनुसार दर्शन को सामान्यत: ज्ञान-मीमांसीय अर्थ में लिया जाता है तथा मेटाफिजिक्स को तत्त्वमीमांसा के अर्थ में जाना जाता है। गौरतलब है कि प्रत्यय को भाषा के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। प्रत्ययात्मक सुधार का अर्थ लगाया जाता है कि दर्शन भाषा को स्पष्ट करे। विचारों की पारस्परिक एकता को स्पष्ट करे। विचारों की पारस्परिक एकता को बचाए रखने के लिये भाषा की स्पष्टता निर्विवाद है। तत्त्वमीमांसा का लक्ष्य परम सत्ता की खोज करना तथा उसके संबंध में ज्ञान उत्पन्न करना है। ज्ञान की प्रकृति वास्तुनिष्ठ या वैज्ञानिक होनी चाहिये। वैज्ञानिक ज्ञान के लिये विधि, तर्क तथा प्रयोग जैसे तत्त्वों का प्रयोग किया जाना ज़रूरी है। यहाँ पर खास पहलू यह भी है कि वैज्ञानिक ज्ञान के साथ ही दार्शनिक के मत तथा अनुभव भी इसमें प्रविष्ट हो जाते हैं जो कि कई बार ज्ञान की वस्तुनिष्ठता पर प्रश्नचिह्न खड़ा करता है। किसी भी विज्ञान में भाषा को उपकरण रूप में लिया जाता है। भाषा के माध्यम से नियमों की स्थापना की जाती है। किंतु विज्ञान में नियम निर्माण में विचार-विनियम करते समय वैज्ञानिक भाषा पर विचार नहीं करते हैं।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

प्लेटो-अरस्तू; प्लेटो *(Plato-Aristotle; Plato)*

प्लेटो ग्रीस के एक ऐसे महान दार्शनिक हुए हैं, जिनके विचारों की झलक उनके बाद आए लगभग सभी दार्शनिकों के विचारों में देखने को मिलती है। उल्लेखनीय है कि प्लेटो महान दार्शनिक सुकरात के शिष्य थे। जब सुकरात को मृत्युदंड दिया गया तो प्लेटो का प्रजातंत्र शासन प्रणाली से विश्वास उठ गया। प्लेटो ने कई महत्त्वपूर्ण पुस्तकों की रचना की, जिनमें 'एपोलॉजी', 'क्राइटो', 'प्रोटेगोरस', 'रिपब्लिक' इत्यादि शामिल हैं। गौरतलब है कि प्लेटो को 'पूर्ण ग्रीक' की उपाधि दी गई, क्योंकि उनके कार्यकाल में ग्रीक दर्शन अपने चरम पर पहुँचा।

प्लेटो के दर्शन पर पूर्व ग्रीक दार्शनिकों का प्रभाव *(Effect of former Greek Philosophers on Plato's Philosophy)*

प्लेटो के दर्शन पर उससे पहले के ग्रीक दार्शनिकों का पर्याप्त प्रभाव दिखता है। इन दार्शनिकों में पार्मेनाइडीज़, सुकरात, पाइथागोरस और हेराक्लाइटस प्रमुख हैं। पार्मेनाइडीज़ ने आनुभविक (Empirical) ज्ञान का खण्डन करते हुए बुद्धिवाद (Rationalism) का समर्थन किया था और माना था कि परिवर्तन और अनित्यता (Temporality) से युक्त अनुभव-जगत् (Empirical World) सत् (Real) नहीं है। वास्तविक सत्ता तो मात्र एक नित्य (Eternal), शाश्वत तथा अपरिवर्तनीय (Immutable) सत् की है। प्लेटो ने बुद्धिवाद (Rationalism) को आधार बनाया, अंतिम सत्ता अर्थात् प्रत्यय (Idea) को नित्य भी कहा, हालाँकि एक नहीं कहा। संभवत: इसी समस्या के कारण उसने विभिन्न प्रत्ययों को एक सोपानिक क्रम (Hierarchy) में व्यवस्थित कर दिया ताकि प्रत्ययों की बहुलता उसके दर्शन में समस्या न बने। पार्मेनाइडीज़ ने वस्तुवाद (Realism) को अपनाया था जिसके अनुसार ज्ञान के विषय की वास्तविक सत्ता होती है। प्लेटो ने इस सिद्धांत का विकास करके 'संवादिता सिद्धांत' (Theory of Correspondence) का निर्माण किया जिसके अनुसार वास्तविक ज्ञान वह है जिसके अनुरूप वास्तविक सत्ता भी विद्यमान हो। ध्यातव्य है कि इस सिद्धांत का आगे चलकर पहले अरस्तू ने तथा फिर कुछ अनुभववादियों (Empircists) और वस्तुवादियों (Realists) ने प्रयोग किया, हालाँकि इसके बीज प्लेटो में दिखते हैं।

प्लेटो का प्रत्यय सिद्धांत *(Plato's Theory of Ideas)*

प्लेटो के प्रत्ययवाद (Idealism) पर सुकरात का भी गहरा प्रभाव है। सुकरात ने सोफिस्टों के 'आत्मनिष्ठतामूलक प्रत्यक्षवाद' (Subjectivistic Perceptionism) के विरुद्ध बुद्धिवाद (Rationalism) का समर्थन किया था, ज्ञानमीमांसा (Epistemology) और नीतिमीमांसा (Ethics) में वस्तुनिष्ठता (Objectivity) को स्थापित किया था। प्लेटो ने भी बुद्धिवाद और ज्ञान की वस्तुनिष्ठता को स्वीकार किया। पाइथागोरस ने जगत् की व्याख्या संख्याओं के माध्यम से की थी। प्लेटो ने भी प्रत्ययों की विशेषताएँ बताते हुए प्रत्ययों को संख्याएँ कहा है। इस रूप में संख्यावाद (Theory of Numbers) का प्रभाव भी प्लेटो पर दिखता है। सीमित प्रभाव हेराक्लाइटस का भी है। उसने अनित्यता (Temporality) या परिवर्तनीयता को सत्य माना था। प्लेटो ने पार्मेनाइडीज़ से प्रभावित होने के बावजूद परिवर्तनीय जगत् को पूर्णत: असत् (Unreal) नहीं माना। इन सभी प्रभावों के बावजूद प्लेटो का दर्शन मौलिक है। उसने पहले से चले आ रहे सिद्धांतों का समन्वय करके आगे के पश्चिमी दर्शन को ठोस आधार प्रदान किया।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

प्लेटो-अरस्तू; अरस्तु *(Plato-Aristotle; Aristotle)*

ग्रीस के महान दार्शनिक प्लेटो के शिष्य **अरस्तू** अपने अध्ययन में व्यावहारिक अधिक रहे। अरस्तू ने तुलनात्मक अध्ययन पद्धति को बल प्रदान किया। उन्होंने बुद्धि और इंद्रियानुभव, दोनों का सामंजस्य करके 'मध्यम मार्ग' (Middle Path) का समर्थन किया।

अरस्तू के अनुसार, ज्ञान के तीन स्तर– (i) इंद्रियानुभव, जिसके माध्यम से हमें केवल विशेषों का पृथक्-पृथक् ज्ञान होता है, (ii) पदार्थ विज्ञान, जिसके द्वारा हम विशेष में सामान्य को खोजते हैं, (iii) ज्ञान, तत्त्व-विज्ञान या दर्शन है।

अरस्तू का द्रव्य सिद्धांत *(Aristole's Substance theory)*

अरस्तू ने प्लेटो की द्रव्य संबंधी धारणा का खंडन करते हुए एक नई धारणा प्रस्तुत की है। प्लेटो का दावा था कि उसके प्रत्यय (Ideas) सत्ता की दृष्टि से द्रव्य (Substance) हैं क्योंकि वे नित्य हैं तथा किसी अन्य पर निर्भर नहीं हैं। अरस्तू के अनुसार द्रव्य की यह धारणा अनुचित है। उसके अनुसार द्रव्य का अर्थ सामान्ययुक्त विशेष या मूर्त विशेष (Concrete Individual) है। जगत की कोई भी वस्तु सामान्य युक्त विशेष होने के कारण द्रव्य है। यह धारणा अरस्तू ने इसलिये दी क्योंकि वह सामान्य को विशेषों से स्वतंत्र मानने को तैयार नहीं था।

अरस्तू ने अपनी द्रव्य संबंधी धारणा के पक्ष में दो तर्क प्रस्तुत किये हैं। पहले तर्क के अनुसार 'तार्किक रूप से (Logically) द्रव्य उसी को कहा जा सकता है जो किसी कथन (Statement) में उद्देश्य (Subject) के रूप में आए, न कि विधेय (Predicate) के रूप में।' प्लेटो के द्रव्य (Substance) सामान्य (Universal) होने के कारण वाक्य में विधेय (Predicate) बनकर आते हैं– जैसे 'मनुष्य में मनुष्यत्व है' या 'घट में घटत्व है' इत्यादि। अतः प्लेटो के प्रत्यय नहीं बल्कि सामान्ययुक्त विशेष, जैसे- मनुष्य, कुर्सी इत्यादि ही द्रव्य हैं।

दूसरे तर्क के अंतर्गत, अरस्तू ने कहा कि 'द्रव्य वह है जो सभी परिवर्तनों का अधिष्ठान (Locus of Changes) हो।' प्लेटो के प्रत्यय नित्य तथा जड़ जगत से पूर्णतः पृथक् होने के कारण परिवर्तनों के आधार नहीं थे। परिवर्तनों का आधार वही द्रव्य हो सकता है जो सामान्य के साथ विशेष को भी धारण करता हो। अतः सामान्ययुक्त विशेष (Concrete Individual) ही द्रव्य है।

अरस्तू के द्रव्य विचार पर आक्षेप यह है कि एक ओर वह इसे सामान्ययुक्त विशेष कहकर परिभाषित करता है तो दूसरी ओर उसने ईश्वर को शुद्ध आकार (Pure Form) होने पर भी द्रव्य मान लिया है। यहाँ अरस्तू भी उसी समस्या से ग्रस्त हो जाता है जो उसके अनुसार प्लेटो में थी।

कार्यकारण भाव/कारणता सिद्धांत *(Theory of Causation)*

प्लेटो की तुलना में अरस्तू की प्रवृत्ति अन्य जगत की व्याख्या करने की कम, अपने जगत की व्याख्या करने की अधिक है। संभवतः इसीलिये कुछ दार्शनिकों ने प्लेटो की तत्त्वमीमांसा को परिकल्पनात्मक (Speculative) या स्वप्नदर्शी (Revisionary) कहा है जबकि अरस्तू की तत्त्वमीमांसा को वर्णनात्मक (Descriptive) कहा है। अरस्तू इस जगत की व्याख्या करने के लिये जगत में हो रहे सभी परिवर्तनों का कारण खोजते हैं और इन्हीं सभी परिवर्तनों की व्याख्या उनके कारणता सिद्धांत में दृष्टिगोचर होती है। इस सिद्धांत की प्रकृति अत्यंत व्यापक है क्योंकि यह कारणों की व्याख्या सिर्फ अतीत के संदर्भ में ही नहीं, बल्कि भविष्य के संदर्भ में भी करता है।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

तर्कबुद्धिवाद; डेकार्ट/देकार्त *(Rationalism; Descrates)*

रेने डेकार्ट ने दार्शनिक जीवन में आने से पहले एक सैनिक के रूप में जीवन बिताया था। एकांतप्रिय होने के कारण उन्होंने लगभग 40 बार अपना मकान बदला, क्योंकि लोगों से जान-पहचान करना और मेल-जोल करना उन्हें पसंद नहीं था। रेने डेकार्ट को आधुनिक दर्शन का पिता कहा जाता है। उनके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं- 'दार्शनिक पद्धति पर विचार', 'प्राथमिक दर्शन पर मनन' और 'दर्शन के सिद्धांत'। डेकार्ट को उनके दर्शन की अपेक्षा उनकी पद्धति और मौलिक सिद्धांतों के कारण अधिक ख्याति प्राप्त हुई। देकार्ट गणित विषय के अत्यंत प्रेमी थे। गणित के नियम निश्चयात्मक थे, इसलिये गणित ने डेकार्ट को अपनी ओर खींचा। यह थोड़ा विचित्र लग सकता है कि डेकार्ट गणित प्रेमी होते हुए भी संदेहवाही विचारक हैं, किंतु असल में वे कट्टर बुद्धिवादी विचारक हैं। उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत- 'मैं सोचता हूँ, अतः मैं हूँ', उनके दर्शन की रीढ़ कहा जा सकता है। समस्त फ्राँस पर आज भी इस सिद्धांत का गहरा असर दिखाई देता है।

तर्कबुद्धिवाद/बुद्धिवाद ज्ञानमीमांसा का वह सिद्धांत है जिसके अनुसार बुद्धि ही ज्ञान प्राप्ति का वास्तविक मार्ग है। पश्चिमी दर्शन में इसकी दीर्घकालिक परंपरा दिखाई पड़ती है। ग्रीक दर्शन में पार्मेनाइडीज़, हेराक्लाइटस, डेमोक्रेटस और सुकरात के साथ-साथ प्लेटो भी इसके समर्थक रहे हैं। आधुनिक काल में डेकार्ट के साथ ही यह परंपरा फिर शुरू हुई जो उसके बाद स्पिनोज़ा, लाइबनित्ज़, वुल्फ तथा हीगेल के दर्शन में दिखाई पड़ती है। लाइबनिज और हीगेल के दर्शन बुद्धिवाद के चरम उदाहरण माने जाते हैं। हीगेल के बाद यह परंपरा कमज़ोर हो गई क्योंकि समकालीन दर्शन में अनुभववाद का महत्त्व ज़्यादा रहा है।

बुद्धिवाद की मान्यताएँ

बुद्धिवाद की कुछ निश्चित मान्यताएँ हैं जो इस प्रकार हैं–

1. बुद्धिवादियों के अनुसार, ज्ञान का मूल लक्षण अनिवार्यता (Necessity), सार्वभौमता (Universality) तथा निश्चयात्मकता (Certainty) है। ऐसा ज्ञान अनुभवों के आधार पर नहीं, सिर्फ संप्रत्ययों (Concepts) के माध्यम से मिल सकता है। उदाहरण के लिये– 'A x 2 = A + A' कथन इसीलिये अनिवार्य है क्योंकि यह संप्रत्ययों पर आधारित है।
2. बुद्धिवादी मानते हैं कि ज्ञान पूर्णतः बुद्धि पर आधारित होता है। ज्ञान की प्रक्रिया में बुद्धि की भूमिका सिर्फ आकार (form/shape) देने तक सीमित नहीं होती बल्कि ज्ञान की उपादान सामग्री (Matter) भी बुद्धि से ही आती है।
3. बुद्धिवादी मानते हैं कि बुद्धि हमेशा सक्रिय होती है, निष्क्रिय नहीं होती। इसका अर्थ है कि जिस समय हम सचेत रूप से ज्ञान की प्रक्रिया में शामिल नहीं होते, तब भी बुद्धि आंतरिक स्तर पर सक्रिय होती है।
4. बुद्धिवाद जन्मजात प्रत्ययों (Innate Ideas) का समर्थक है। इसके अनुसार, प्रत्येक मनुष्य की आत्मा में जन्मजात रूप से कुछ अनिवार्य प्रत्यय होते हैं जो स्वयंसिद्ध (Axioms) होते हैं। इन अनिवार्य प्रत्ययों के आधार पर ही हम ज्ञान की प्राप्ति करते हैं। इसमें अंतर यह है कि जहाँ डेकार्ट के अनुसार, कुछ ही प्रत्यय जन्मजात हैं, वही लाइबनित्ज़ ने संपूर्ण ज्ञान को जन्मजात माना है।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

तर्कबुद्धिवाद; स्पिनोज़ा *(Rationalism; Spinoza)*

स्पिनोज़ा ने दर्शन में क्रांतिकारी विचारों का प्रतिपादन किया और शायद इसी कारण उनके दर्शन में धार्मिक अंधविश्वासों के प्रति तीव्र अरुचि दिखाई देती है। इसी वजह से उन्हें अपने यहूदी समाज और परिचितों द्वारा बहिष्कृत कर दिया गया था। अपने कटु धार्मिक विचारों के कारण स्पिनोज़ा यहूदी धर्म के लोगों के साथ-साथ ईसाई धर्म के लोगों के निशाने पर भी आ गए। उनके विरोधियों ने उन्हें मारने तक की असफल कोशिश की और 'निंदनीय नास्तिक' की उपाधि प्रदान कर दी गई। स्पिनोज़ा ने अपने विचारों को पुस्तक 'नीतिशास्त्र' में वर्णित किया है। उल्लेखनीय है कि स्पिनोज़ा की पुस्तक 'नीतिशास्त्र' को विद्वानों द्वारा एक **विचित्र पुस्तक** की संज्ञा दी गई है।

स्पिनोज़ा का द्रव्य सिद्धांत *(Spinoza's Substance Theory)*

स्पिनोज़ा बुद्धिवादी (Rationalist) दार्शनिक हैं और उसने घोषित रूप से ज्यामितिक विधि (Geometrical method) को अपने दर्शन का आधार बनाया है। ज्यामितिक विधि की मान्यताओं के अनुसार वह पहले एक परिभाषा तय करता है और फिर निगमन (Deductive) पद्धति के आधार पर निश्चयात्मक निष्कर्ष निकालता है। उसका द्रव्य (Substance) सिद्धांत भी इसी पद्धति से व्यक्त हुआ है। उसके अनुसार ''द्रव्य वह है जो अपनी सत्ता (Existence) व ज्ञान (Knowledge) के लिये स्वतंत्र (Independent) है।'' द्रव्य की सभी विशेषताएँ इसी परिभाषा के निगमन से स्पष्ट हो जाती हैं, जो निम्नलिखित हैं–

1. द्रव्य एक है तथा अद्वितीय है क्योंकि जो पूर्णत: स्वतंत्र है वह एक ही हो सकता है। किसी भी अन्य की सत्ता स्वतंत्रता को सीमित कर देती है।
2. द्रव्य स्वकारण या स्वयंभू (Causa sui) है अर्थात् उसका कोई अन्य कारण नहीं है क्योंकि जो किसी कारण पर निर्भर है, वह स्वतंत्र नहीं है।
3. द्रव्य निरपेक्ष (Absolute) है अर्थात् वह किसी भी अन्य सत्ता की अपेक्षा नहीं रखता। पूर्ण स्वतंत्रता निरपेक्षता के रूप में ही व्यक्त होती है।
4. द्रव्य नित्य (Eternal), शाश्वत व कालातीत (Non-temporal) है क्योंकि पूर्ण स्वतंत्रता तभी होगी जब वह काल से भी स्वतंत्र होगा।
5. द्रव्य सर्वव्याप्त (Omnipresent) है अर्थात् देश से भी सीमित नहीं है।
6. द्रव्य अपरिमित (Infinite) है क्योंकि द्रव्य किसी भी दृष्टि से सीमित नहीं किया जा सकता।
7. द्रव्य निर्गुण या निर्वैयक्तिक (Impersonal) है क्योंकि उसमें असंख्य गुण एक साथ विद्यमान हैं और असीमित गुणों की एक साथ उपस्थिति के कारण वह गुणों के माध्यम से व्याख्येय (Describable) नहीं है।
8. द्रव्य ज्ञान की दृष्टि से स्वयंसिद्ध (Self-proved) है अर्थात् उसे सिद्ध करने के लिये किसी अन्य प्रमाण की अपेक्षा नहीं है।
9. द्रव्य पूर्ण (Perfect) है अर्थात् उसमें कोई प्रयोजन (Purpose) भी नहीं है क्योंकि पूर्ण स्वतंत्रता के लिये अभावों एवं प्रयोजन से भी स्वतंत्र होना ज़रूरी है।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

तर्कबुद्धिवाद; लाइबनित्ज़ *(Rationalism; Leibnitz)*

लाइबनित्ज़ बचपन में ही अपने पिताजी के साथ पुस्तकालय में जाकर समय व्यतीत करने लगे। वहीं से उनके अंदर दर्शन के प्रति रुचि जाग्रत् हुई। अपनी तीव्र बुद्धि के कारण वे कई विषयों के विद्वान हो गए। इस बात का प्रमाण यह है कि उन्हें 20 वर्ष की उम्र में डॉक्टरेट की उपाधि मिल गई थी। लाइबनित्ज़ ने विभिन्न मतों के मध्य समन्वय स्थापित करने को अपना लक्ष्य बनाया। उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'चिदणुशास्त्र' है। डेकार्ट ने चित् और अचित् को दो परस्पर विरोधी द्रव्य माना। उनको दर्शन जगत में द्वैताद्वैतवादी दार्शनिक माना गया है।

लाइबनित्ज़ का चिदणुवाद *(Leibnitz's Monadology)*

लाइबनित्ज़ बुद्धिवादी दार्शनिक है। बुद्धिवादी दर्शन की मूलभूत धारणाएँ उसके दर्शन में स्पष्टत: दिखती हैं। इसके अतिरिक्त न्यूटन के परमाणुवाद (Atomism) और रेखागणित के बिंदुवाद (Pointism) का प्रभाव उस पर पर्याप्त मात्रा में है। इन्हीं सब प्रभावों से उसका चिदणुवाद निर्मित हुआ है।

लाइबनित्ज़ का द्रव्य सिद्धांत की परिभाषा *(Leibnitz's theory of Substance)*

पश्चिमी दर्शन में, विशेषत: आधुनिक बुद्धिवाद में द्रव्य की व्याख्या करना सभी दार्शनिकों के लिये एक कठिन चुनौती रही है। प्लेटो, अरस्तू और उसके बाद डेकार्ट व स्पिनोज़ा ने यह प्रयास अपने-अपने तरीके से किया है। डेकार्ट ने माना कि द्रव्य वह है जो अपनी सत्ता व ज्ञान में स्वतंत्र है। इस आधार पर उसने चित् (Soul) और अचित् (Matter) को सापेक्ष द्रव्य (Relative Substances) और ईश्वर को निरपेक्ष द्रव्य (Absolute Substance) के रूप में स्थापित किया। स्पिनोज़ा ने द्रव्य की परिभाषा को यही रखा किंतु डेकार्ट के दर्शन में निहित विसंगति को दूर किया। चूँकि इस परिभाषा के अनुसार द्रव्य को एक ही होना चाहिये, अत: स्पिनोजा ने द्रव्य के द्वैतवाद (Dualism) के स्थान पर एकतत्ववाद (Monism) को स्वीकार किया और चित् व अचित् की व्याख्या गुणों के द्वैतवाद (Dualism of attributes) के रूप में की। लाइबनित्ज़ ने द्रव्य सिद्धांत की परिभाषा बदल दी। उसके अनुसार, ''द्रव्य वह है जो स्वतंत्रशक्तिसंपन्न है अर्थात् जिसमें क्रिया करने की शक्ति है, वही द्रव्य है।'' हीनयानी बौद्ध दर्शन में भी अर्थक्रियासामर्थ्य को ही सत् का लक्षण माना गया है। लाइबनित्ज़ के अनुसार, यह क्रियाशक्तिसामर्थ्य बहुत सारे विस्ताररहित (Non-extended) चेतन अणुओं में पाया जाता है जिन्हें चिदणु (Monads) कहते हैं। ये सभी चिदणु द्रव्य हैं। जड़ का स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है, वह चेतना की अल्पता का ही परिचायक है। इस प्रकार डेकार्ट का द्वैतवाद और स्पिनोज़ा का एकतत्ववाद लाइबनिज के दर्शन में अनेकतत्ववाद (Pluralism) बन गया।

चिदणुओं *(Monads)* की विशेषताएँ

लाइबनित्ज़ ने संपूर्ण ब्रह्मांड की व्याख्या चिदणुओं के माध्यम से की है। चिदणुओं की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. चिदणु निरवयव (Partless), सरल (Simple) तथा विस्ताररहित (Extensionless) हैं। इस धारणा पर गणित के बिंदुवाद का प्रभाव है क्योंकि बिंदु भी निरवयव व विस्ताररहित होता है। दोनों में अंतर यह है कि चिदणु बिंदु की तरह अवास्तविक नहीं, वास्तविक है।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

इंद्रियानुभववाद; लॉक *(Empiricism; Locke)*

ऑक्सफोर्ड में लॉक ने पदार्थ विज्ञान, रसायन विज्ञान और चिकित्सा विज्ञान का अध्ययन किया। लॉर्ड एश्ले के साथ लॉक का राजनीतिक जीवन भी चला जो कि उतार-चढ़ाव वाला रहा। उन्होंने प्रसिद्ध पुस्तक 'मानव बुद्धि पर निबंध' (Essay on Human Understanding) को लिखा जो कि पाश्चात्य दर्शन में बड़ा महत्त्व रखती है। उनके अंदर व्यवहारप्रियता तथा व्यक्ति-स्वातंत्र्य कूट-कूटकर भरा था। लॉक ने अपने दर्शन में तत्वमीमांसा के स्थान पर ज्ञानमीमांसा को अधिक महत्त्व प्रदान किया। लॉक ने कहा, "समस्त ज्ञान की जननी इंद्रियानुभूति है और हमारी आत्मा में कोई जन्मजात प्रत्यय नहीं है।" तब ज्ञान का मूल स्रोत कहाँ है? लॉक कहते हैं कि इंद्रियानुभव में।

इंद्रियानुभवाद का सामान्य परिचय *(General Introduction of Empiricism)*

इंद्रियानुभववाद/अनुभववाद ज्ञानमीमांसा का वह सिद्धांत है जिसके अनुसार ज्ञान का निर्णायक स्रोत अनुभव होता है। जब अनुभवों से मिलने वाली सामग्री प्राप्त होती है तो उन्हीं के आधार पर निर्णय (Judgement) बनते हैं और इन्हीं निर्णयों की व्यवस्था ज्ञान कहलाती है।

अनुभववाद का पाश्चात्य दर्शन में काफी लंबा इतिहास रहा है। यह सबसे पहले ग्रीक दर्शन में प्रोटागोरस और अन्य सोफिस्टों के साथ-साथ जेनो आदि स्टोइक दार्शनिकों में दिखता है। इसके बाद संक्रमण काल के दर्शन (Transitional Philosophy) में फ्राँसिस बेकन तथा थॉमस हॉब्स ने इसका समर्थन किया। आधुनिक काल में लॉक, बर्कले तथा ह्यूम ने अनुभववाद की परंपरा को आगे बढ़ाया। इसी काल में ऑगस्ट कॉम्ट तथा जे.एस. मिल ने भी विज्ञान सुसंगत अनुभववाद का प्रयोग किया। समकालीन दर्शन में अनुभववाद का महत्त्व और ज्यादा बढ़ा। तार्किक भाववाद (Logical Positivism), जिसका दूसरा नाम वैज्ञानिक अनुभववाद (Scientific Empiricism) भी है, इसका सबसे बड़ा समर्थक दर्शन है। इसके अतिरिक्त क्वाइन ने अनुभववाद का उत्कट रूप, उत्कट अनुभववाद (Radical Empiricism) के रूप में प्रस्तुत किया। सामान्य रूप से लोक व्यवहार भी अनुभववाद की मान्यताओं को स्वीकार करके चलता है।

अनुभववाद की विशेषताएँ

1. अनुभववाद के अनुसार, ज्ञान की सबसे प्रमुख विशेषता वास्तविकता या नवीनता है जो अनुभव से ही आती है। बुद्धिवादी दार्शनिक ज्ञान में अनिवार्यता को महत्त्व देते हैं किंतु अनुभववाद के अनुसार, जिन कथनों में अनिवार्यता होती है वे तो ज्ञानात्मक होते ही नहीं क्योंकि वे सिर्फ पुनर्कथन (Tautology) या व्याघाती कथन (Contradictory Statements) होते हैं। इसलिये अनुभववादियों के अनुसार ज्ञान का अर्थ है प्रमाणयुक्त विश्वास।
2. अनुभववाद के अनुसार, ज्ञान प्राप्ति का मूल साधन अनुभव है। उसमें बुद्धि की भूमिका उपादान सामग्री के रूप में नहीं सिर्फ नियामक (Regulative) रूप में है अर्थात् जब अनुभव से हमें संवेदन (Sensations) और स्वसंवेदन (Reflections) मिलते हैं तो बुद्धि उन पर क्रिया करके उन्हें निर्णयों के रूप में परिवर्तित

Copyright– Drishti The Vision Foundation

इंद्रियानुभववाद; बर्कले *(Empiricism; Berkeley)*

बर्कले ने अपने दर्शन की शुरुआत लॉक की भूलें ठीक करके कीं। बर्कले ने अपना लक्ष्य धर्म एवं दर्शन के सामंजस्य को बनाया। इनके दर्शन में जड़वाद का विरोध तथा विज्ञानवाद का समर्थन किया गया है। बर्कले की महत्त्वपूर्ण कृतियाँ- 'मानवीय ज्ञान के सिद्धांत', 'हाइल और फिलोनोउस के तीन संवाद', 'एल्सीफ्रोन या सूक्ष्मदर्शी दार्शनिक और सीरिस' हैं।

अभौतिकवाद/जड़ पदार्थ का खंडन *(Inmaterialism/Refutation of Matter)*

बर्कले ईश्वरवादी (Theist) व अध्यात्मवादी (Spiritualist) दार्शनिक है। उसका मानना था कि हमारे जगत में व्याप्त अनैतिकता का मूल कारण भौतिकतावादी मनोवृत्ति है। उसने पाया कि भौतिकतावादी मनोवृत्ति का खडन तभी हो सकता है जब हम भौतिक पदार्थ को असत् मान लें। इसी कारण उसने भौतिक पदार्थ की सत्ता का खण्डन अपने अनुभववाद के आधार पर किया है।

भौतिक पदार्थ के खण्डन के लिये बर्कले ने निम्नलिखित युक्तियाँ प्रस्तुत की हैं–

1. **ज्ञानमीमांसीय युक्ति (Epistemological Argument):** इस युक्ति के अनुसार बर्कले का दावा है कि जड़ पदार्थ ज्ञान का विषय नहीं बन सकता, अत: इसकी सत्ता भी नहीं मानी जा सकती। जड़ पदार्थ का ज्ञान न तो प्रत्यक्ष से संभव है और न ही बुद्धि से। यह प्रत्यक्ष से इसलिये नहीं हो सकता क्योंकि प्रत्यक्ष केवल प्रत्ययों का होता है। यह ज्ञान बुद्धि से भी नहीं हो सकता क्योंकि बुद्धि का कार्य उपलब्ध ज्ञान का विश्लेषण करना मात्र है, न कि किसी नए ज्ञान को उत्पन्न करना। उसने यह भी कहा कि यदि हम लॉक की तरह संवेदन प्रत्ययों के आधार पर गुणों के अधिष्ठान (Substratum) के रूप में द्रव्य का अनुमान करें तो हम अनवस्था दोष (Fallacy of infinite regress) के शिकार हो जाएंगे क्योंकि प्रत्यय का अधिष्ठान द्रव्य को मानने से द्रव्य के आश्रय की भी खोज करनी होगी। इससे अनवस्था दोष पैदा हो जाएगा।
2. **तार्किक युक्ति (Logical Argument):** इसके अंतर्गत बर्कले ने लॉक के अमूर्त प्रत्यय (Abstract Idea) संबंधी विचार का खंडन किया है। लॉक ने माना था कि हमारी बुद्धि में विद्यमान 6 क्षमताओं में से एक अमूर्तीकरण (Abstraction) की क्षमता है जिससे सामान्य (Universal) तथा द्रव्य (Substance) प्रत्यय बनता है। बर्कले ने दावा किया कि सामान्य का प्रत्यय तो हो सकता है किंतु अमूर्त प्रत्यय की धारणा भ्रामक है। छोटे बच्चों की भाषा में सामान्य प्रत्यय (Universal Ideas) तो जातिवाचक संज्ञाओं के रूप में आते हैं किंतु उनमें अमूर्तीकरण की क्षमता नहीं मानी जा सकती। वस्तुत: कोई भी सामान्य प्रत्यय बोध के स्तर पर सामान्य होता है किंतु कोई न कोई मूर्त-प्रत्यय (Concrete Idea) ही उसका संकेत करता है।
3. **कारण-कार्य मूलक युक्ति (Causal Argument):** इसके अंतर्गत बर्कले ने लॉक के उन तर्कों का खंडन किया है जिनमें कारणता के आधार पर जड़ पदार्थ का अस्तित्व स्वीकारा गया है। लॉक का तर्क था कि प्रत्यय स्वत: उत्पन्न नहीं हो सकते, उनकी उत्पत्ति का कारण पदार्थ ही हो सकता है। इसके खंडन में बर्कले ने कहा कि चेतन प्रत्ययों को उत्पन्न करने की शक्ति जड़ पदार्थों में नहीं बल्कि आत्मा व ईश्वर जैसी चेतन सत्ताओं में ही मानी जा सकती है। लॉक का दूसरा तर्क यह था कि प्रत्यक्ष (Perception) और स्मृति (Memory) का अंतर सिद्ध करता है कि जहाँ स्मृति का संबंध आंतरिक स्थिति से है, वहीं प्रत्यक्ष का संबंध बाह्य भौतिक वस्तु से है। बर्कले ने इसके खंडन में कहा कि इन दोनों में अंतर मात्र यह है कि संवेदन के बाह्य प्रत्यय ईश्वरोत्पन्न हैं जबकि स्मृति के आंतरिक प्रत्यय

Copyright– Drishti The Vision Foundation

इंद्रियानुभववाद; ह्यूम *(Empiricism; Hume)*

शुरू से ही ह्यूम की साहित्य, दर्शन और इतिहास में गहन रुचि रही। फ्राँस में रहकर उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'मानव स्वभाव पर निबंध' (Treatise on Human Nature) लिखी थी। ह्यूम ने आत्म-तत्त्व की सत्ता का भी निराकरण करके जीव और ईश्वर दोनों की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की। ह्यूम का मानना था कि इंद्रियानुभववाद को मानने पर किसी तत्त्व की प्रतिष्ठा नहीं हो सकती- न ईश्वर की, न जीव की और न ही जगत की। इंद्रियानुभववाद ह्यूम के दर्शन में आकर अज्ञेयवाद के रूप में दिखाई देता है। ह्यूम ने समस्त ज्ञान को दो विषयों पर आश्रित बताया- इंद्रिय संस्कारों पर और विज्ञान पर। गौरतलब है कि इंद्रिय संस्कार (Impression) शब्द का सबसे पहले प्रयोग ह्यूम ने ही किया था।

ह्यूम की ज्ञानमीमांसा *(Hume's Epistemology/Theory of Knowledge)*

ह्यूम की ज्ञानमीमांसा प्रत्यक्षवाद (Perceptionism) पर आधारित है। अनुभववाद का आरंभ लॉक से ही हो गया था किंतु लॉक व बर्कले अपनी अनुभववादी ज्ञानमीमांसा से पूर्णत: सुसंगत नहीं रह पाए। उनकी तत्वमीमांसा में अनुभववाद खण्डित हो गया क्योंकि लॉक ने जड़, आत्मा व ईश्वर तीनों को स्वीकार कर लिया जबकि बर्कले ने जड़ पदार्थ को अस्वीकार करते हुए आत्मा व ईश्वर को मान लिया। ह्यूम का उद्देश्य यह है कि बिना किसी तत्वमीमांसीय पूर्वाग्रह (Prejudice) के एक निश्चित अनुभववादी ज्ञानमीमांसा स्थापित की जाए।

ह्यूम ने अपनी ज्ञानमीमांसा में प्रमुखत: तीन प्रश्नों को उठाया है:- 1. ज्ञान के घटक कौन-कौन से हैं? 2. ज्ञान के प्रकार क्या हैं? 3. ज्ञान का निर्माण कैसे होता है अर्थात् प्रत्ययों में पारस्परिक संबंध किस प्रकार स्थापित होता है?

ज्ञान के घटक *(Constituents of Knowledge)*

ह्यूम के अनुसार हमारा संपूर्ण ज्ञान अनुभव या प्रत्यक्ष पर आधारित है और यह प्रत्यक्ष दो प्रकार के हैं– संस्कार (Impressions) व प्रत्यय (Ideas)। संस्कार शब्द का प्रयोग ह्यूम ने पहली बार किया किंतु इसका अर्थ वही है जो लॉक के संवेदन व स्वसंवेदन का है। संस्कार हमारी इन्द्रियों पर पड़ने वाले प्रभाव हैं जो दो प्रकार के हैं– संवेदन संस्कार (Impressions of Sensation) व स्वसंवेदन संस्कार (Impressions of Reflection)। संवेदन संस्कारों का संबंध हमारी पाँचों ज्ञानेन्द्रियों से है जबकि स्वसंवेदन संस्कार का संबंध मन से है। संवेदन संस्कार का स्रोत ह्यूम के अनुसार अज्ञात है जबकि स्वसंवेदन का स्रोत हमारे मन में निहित प्रत्यय ही हैं।

संस्कार व प्रत्यय में संबंध यह है कि जब संस्कार क्षीण हो जाते हैं तो वे प्रत्यय बन जाते हैं। इस अर्थ में संस्कार पूर्ववर्ती व प्राथमिक हैं जबकि प्रत्यय परवर्ती व द्वितीयक हैं। संस्कार बिंब हैं जबकि प्रत्यय प्रतिबिंब हैं। कभी-कभी ऐसा होता है कि प्रत्यय संस्कारों की तुलना में अधिक प्रबल होते हैं, विशेषत: बीमारी के समय, सोते समय या किसी मनोरोग के अंतर्गत।

ह्यूम ने प्रत्ययों का विभाजन सरल (Simple) व मिश्र (Complex) में किया है। **सरल प्रत्यय (Simple Ideas)** वे हैं जो अपने मूल संस्कारों के अनुरूप होते हैं जबकि **मिश्र प्रत्यय (Complex Ideas)** वे हैं जिनके अनुरूप मूल संस्कार का होना अनिवार्य नहीं है। उदाहरण के लिये, पर्वत का प्रत्यय सरल प्रत्यय है

Copyright– Drishti The Vision Foundation

कांट *(Kant)*

जर्मन दार्शनिक कांट की गणना विश्व के महान दार्शनिकों में होती है। कांट अपने विश्वविद्यालय में गणित, विज्ञान और दर्शन के प्रतिभाशाली छात्र रहे। उन पर लाइबनित्ज़, वोल्फ, लॉक, बर्कले के दर्शन का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। कांट की कुछ महत्त्वपूर्ण कृतियाँ– 'शुद्ध ज्ञान की परीक्षा', 'आचारमूलक ज्ञान की परीक्षा', 'कला और सौंदर्यमूलक ज्ञान की परीक्षा' हैं।

संश्लेषणात्मक प्रागनुभाविक निर्णय की संभवता *(Possibility of Synthetic a priori Judgements)*

ज्ञान की परिभाषा तथा संभाव्यता *(Definition and Possibility of Knowledge)*

कांट उस समय का दार्शनिक है जब बुद्धिवाद (Rationalism) व अनुभववाद (Empiricism) की टकराहट चरम स्तर पर थी। वह कभी वुल्फ (Woolf) और लाइबनित्ज़ के बुद्धिवाद से तो कभी ह्यूम के अनुभववाद से प्रभावित हुआ और अंततः उसने यह जान लिया कि इनमें से कोई भी मत उसकी अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतर सकता। इसका कारण यह है कि बुद्धिवादियों के ज्ञान में अनिवार्यता (Necessity) व सार्वभौमिकता (Universality) तो मिल जाती है किंतु नवीनता या वास्तविकता (Reality) नहीं मिलती; जबकि अनुभववादियों के ज्ञान में केवल नवीनता मिलती है, अनिवार्यता और सार्वभौमिकता नहीं। कांट एक ऐसे ज्ञान की खोज में था जिसमें ये तीनों तत्व एक साथ मिलें और उसकी यह खोज ज्ञान की जिस परिभाषा में पूरी हुई, वह है– **''ज्ञान संश्लेषणात्मक प्रागनुभविक निर्णयों की व्यवस्था है।''** ("Knowledge is the system of synthetic apriori judgements.")

इस परिभाषा का विश्लेषण तीन शब्दों के आधार पर किया जा सकता है–'निर्णय' (Judgement), 'संश्लेषणात्मक' (Synthetic), और 'प्रागनुभविक' (Apriori)। कांट के अनुसार निर्णय (Judgement) वह प्रतिज्ञप्ति (Proposition) है जिसमें एक उद्देश्य (Subject) व एक विधेय (Predicate) होता है, जैसे- 'फूल लाल है' या 'मनुष्य विवेकशील है'। प्रतिज्ञप्तियाँ उद्देश्य व विधेय के संबंध के आधार पर दो प्रकार की हो सकती हैं– संश्लेषणात्मक (Synthetic) व विश्लेषणात्मक (Analytic)। संश्लेषणात्मक प्रतिज्ञप्ति (Synthetic Proposition) वह है जिसका विधेय पद उद्देश्य पद के संबंध में कोई नई सूचना प्रदान करे, जैसे– 'घोड़ा काला है'; जबकि विश्लेषणात्मक प्रतिज्ञप्ति (Analytic Proposition) वह है जिसका विधेय पद उद्देश्य पद की ही व्याख्या करता है, कोई नई सूचना नहीं देता, जैसे– 'मानव में मानवत्व है' या 'भौतिक वस्तु में विस्तार है'। प्रतिज्ञप्तियों को अनुभव की अपेक्षा के आधार पर पुनः दो वर्गों में बाँटा जा सकता है– आनुभविक प्रतिज्ञप्ति (Priori Proposition) व प्रागनुभविक प्रतिज्ञप्ति (Apriori Proposition)। आनुभविक प्रतिज्ञप्ति (Priori Proposition) की सत्यता हमारे अनुभवों के आधार पर स्थापित होती है जैसे– 'बर्फ ठंडी है' या 'संतरा मीठा है', जबकि प्रागनुभविक प्रतिज्ञप्ति (Apriori Proposition) हमारे अनुभवों से निरपेक्ष और अनिवार्य होती है, जैसे 3+2=5 इत्यादि। कांट ने इन दोनों आधारों पर किये भेदों को परस्पर मिलाया और पाया कि संश्लेषणात्मक प्रागनुभविक प्रतिज्ञप्ति (Synthetic Apriori Propostion) वह प्रतिज्ञप्ति है जो प्रागनुभविक (Apriori) होने

Copyright– Drishti The Vision Foundation

हीगेल *(Hegel)*

हीगेल का जन्म जर्मनी के स्टटगार्ट नगर में हुआ। ग्रीक साहित्य और कला के प्रति उनका गहरा लगाव रहा। हीगेल ने अपनी औपचारिक शिक्षा समाप्त होने के पश्चात् शिक्षक के रूप में सेवा दी। शिक्षक रहते हुए उन्होंने अपने दार्शनिक सिद्धांतों को जन्म दिया। हीगेल की गणना विश्व के महानतम दार्शनिकों में की जाती है। हीगेल ने पाश्चात्य दर्शन का मार्मिक और विशद विवेचन किया। मानव-समाज की ऐतिहासिक व्याख्या, संस्कृति के विविध रूपों पर उन्होंने लिखा है। हीगेल अपने दर्शन में कांट के द्वैतवाद तथा अज्ञेयवाद का घोर विरोध करते हैं। कांट का व्यवहार एवं परमार्थ का द्वैतवाद हीगेल को स्वीकार नहीं हुआ।

द्वंद्वात्मक विधि *(Dialectical Method)*

हीगेल ने अपने निरपेक्ष प्रत्ययवाद (Absolute Idealism) में द्वंद्वात्मक विधि का प्रयोग किया है। उसने यह विधि फिक्टे से ली किन्तु अपनी ओर से उसका विस्तार किया। कांट ने कोटियों की संख्या 12 मानी थी किन्तु हीगेल ने 'द्वंद्व विधि' के अंतर्गत दिखाया है कि कोटियाँ अनंत हो सकती हैं।

हीगेल ने निरपेक्ष प्रत्यय के अंतर्गत उसके आंतरिक तार्किक विकास-क्रम को द्वंद्व-विधि के माध्यम से प्रस्तुत किया। इस विधि का मूल नियम यह है कि कोई भी वैचारिक विकास द्वंद्व या संघर्ष के माध्यम से ही होता है। सबसे पहले एक विचार आता है जिसे 'वाद' (Thesis) कहते हैं। फिर इसके विरुद्ध एक विचार आता है जो इसके भीतर से ही विकसित होता है, इसे 'प्रतिवाद' (Anti-Thesis) कहते हैं। जब वाद और प्रतिवाद का संघर्ष तीव्र हो जाता है तो दोनों का समन्वय 'संवाद' (Synthesis) के रूप में होता है। कुछ समय के बाद संवाद पुनः वाद बन जाता है और संघर्ष पुनः शुरु हो जाता है। यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती है जब तक संवाद (Synthesis) पूर्णता (Perfection) का पर्याय न हो जाए।

हीगेल ने द्वंद्व विधि के माध्यम से निरपेक्ष प्रत्यय के आंतरिक विकास को दिखाया है। सबसे पहले 'अमूर्त प्रत्यय' (Abstract Idea) वाद बनता है तो 'मूर्त प्रकृति' (Concrete Nature) प्रतिवाद के रूप में उपस्थित होती है। इन दोनों के समन्वय से 'आत्मा' (Mind) के रूप में संवाद विकसित होता है। हीगेल ने बहुत बड़ी संख्या में ऐसे त्रिक् प्रस्तुत किये और अंततः 'निरपेक्ष प्रत्यय' तक यात्रा पूरी की।

हीगेल ने द्वंद्वात्मक विधि से कई मनमाने निष्कर्ष निकाले जिन्हें बाद के दार्शनिकों ने खारिज किया है। उदाहरण के लिये, उसने ईसाई धर्म को अन्य धर्मों की तुलना में; राज्य को परिवार की तुलना में और दर्शन को धर्म तथा सौंदर्यशास्त्र (Aesthetics) की तुलना में श्रेष्ठ बताया है। तब भी, इस विधि का महत्त्व यह है कि कार्ल मार्क्स ने इसी का प्रयोग भौतिकवादी तत्वमीमांसा के साथ किया और मार्क्सवाद को जन्म दिया।

तार्किक सत् है, सत् तार्किक है *(Real is rational and rational is real)*

हीगेल का दर्शन बुद्धिवाद का चरम स्तर है और उसके चरम बुद्धिवाद से निकलने वाला निष्कर्ष यही है कि 'तार्किक' तथा 'सत्' में तादात्म्य (Identical) संबंध है। इसका अर्थ है कि तर्कशास्त्र (Logic) और तत्वमीमांसा (Metaphysics) में कोई भेद नहीं। इसके पीछे हीगेल का मूल विचार यह है कि जो कोटियाँ सत्ता (Existence) की हैं, वही कोटियाँ तर्क (Logic) की भी हैं।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

जी.ई. मूर *(G.E. Moore)*

जी.ई. मूर को ब्रिटिश दर्शन के विभिन्न प्रबल स्तंभों में से एक माना जाता है। मूर रसेल और विट्गेंस्टीन के समकालीन रहे। मूर से पहले के दार्शनिक तत्त्ववादी दर्शन में अधिक उलझे हुए थे, लेकिन मूर को यह प्रवृत्ति अबौद्धिक प्रतीत हुई। मूर का कहना था कि समस्त तात्त्विक समस्याओं का समाधान एक साथ करना तर्कसंगत नहीं है, क्योंकि संपूर्णता तथा बहुकार्य का उद्देश्य सत्य की खोज में बाधा उत्पन्न कर सकता है। इसलिये मूर ने अलग-अलग समस्याओं के अलग-अलग समाधान तथा तरीकों पर बल प्रदान किया। मूर ने समस्याओं को अपने पूर्ववर्ती दार्शनिकों की पुस्तकों व उनके विचारों में से ही निकाला।

प्रत्ययवाद का खंडन *(Refutation of Idealism)*

मूर समकालीन दर्शन का आरंभिक दार्शनिक है जिसने पहले प्रत्ययवाद (Idealism) को स्वीकार किया था किंतु बाद में मोहभंग के कारण वस्तुवाद (Realism) पर विश्वास करने लगा। उसका समय हीगेल आदि प्रत्ययवादियों के महत्त्व का समय था और वह प्रत्ययवाद के विरुद्ध सामान्य बुद्धि (Common Sense) तथा वस्तुवाद (Realism) की स्थापना करना चाहता था।

'प्रत्ययवाद का खंडन' (The Refutation of Idealism) नामक लेख में मूर ने प्रत्ययवाद को खंडन का विषय बनाया है। उसने सभी प्रत्ययवादियों के दर्शन का खंडन नहीं किया बल्कि बर्कले को उनका प्रतिनिधि मानकर तथा बर्कले के प्रसिद्ध सूत्र 'सत्ता दृश्यता है' (Esse Est Percipii) को प्रत्ययवाद का मूल आधार मानकर इसी कथन का खंडन किया। इस कथन में प्रत्ययवादियों की यह मूल मान्यता व्यक्त हुई है कि ज्ञेय वस्तु का अस्तित्त्व ज्ञाता से स्वतंत्र नहीं होता, ज्ञेय विषय व ज्ञाता में आंतरिक संबंध (Internal Relation) होता है।

'सत्ता दृश्यता है' कथन का खंडन करने के लिये मूर ने प्रमुखत: दो युक्तियाँ प्रस्तुत की हैं- तार्किक युक्ति (Logical Argument) तथा ज्ञानमीमांसीय युक्ति (Epistemological Argument)। तार्किक युक्ति में उसने इस कथन (Statement) का विश्लेषण (Analysis) किया तथा ज्ञानमीमांसीय युक्ति में उसने ज्ञान की प्रक्रिया (Process of Knowledge) का विश्लेषण किया।

तार्किक युक्ति *(Logical Argument)*

मूर के अनुसार 'सत्ता दृश्यता है' (Esse Est Percipii) कथन में भाषिक दृष्टि से संयोजक (Copula) शब्द 'है' (is) अत्यंत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि उद्देश्य (Subject) व विधेय (Predicate) के संबंध की व्याख्या इसी पद से हो रही है। उसके अनुसार 'है' शब्द का विश्लेषण करके हम इस कथन के तीन अर्थ कर सकते हैं किंतु तीनों ही अर्थों से प्रत्ययवाद सिद्ध नहीं होता।

1. **पूर्ण तादात्म्य (Complete Identity):** 'है' शब्द के पहले अर्थ के अनुसार यह कथन उद्देश्य (Subject) व विधेय (Predicate) के पूर्ण तादात्म्य (Complete Identity) को व्यक्त करता है अर्थात् उद्देश्य व विधेय का गुणार्थ (Denotation) पूर्णत: समान है। मूर के अनुसार, यह संबंध केवल दो प्रकार के कथनों में हो सकता है- परिभाषा (Definition) या पुनर्कथन (Tautology)। परिभाषा (जैसे- 'मानव विवेकशील प्राणी है') में उद्देश्य के संबंध में कोई भी नई सूचना नहीं मिलती है। पुनर्कथन (जैसे 'लाल लाल है') उद्देश्य की पुनरावृत्ति मात्र होता है। इनमें से किसी भी अर्थ में 'सत्ता दृश्यता है' को रखें तो इससे कोई नवीन ज्ञान प्राप्त नहीं होगा क्योंकि यह वाक्य 'सत्ता सत्ता है' या 'दृश्यता दृश्यता है' की ही तरह माना जाएगा। स्पष्ट है कि प्रत्ययवादी भी इस अर्थ को स्वीकार नहीं करेंगे।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

रसेल *(Russell)*

पाश्चात्य दर्शन के इतिहास में मूर तथा रसेल समकालीन विचारक रहे हैं। रसेल का चिंतन क्षेत्र मूर के परंपरागत चिंतन क्षेत्र से अधिक विस्तृत है। गणित, तर्कशास्त्र, तकनीकी, समाज और राजनीतिक दर्शन इत्यादि पर रसेल ने विचार प्रस्तुत किये हैं। किंतु रसेल को पढ़ने में एक समस्या यह उत्पन्न हुई कि उनके विचार लगातार बदलते रहे। जो विचार अनुभव तथा विज्ञान पर खरा नहीं उतरता उस विचार को वे त्याग देते। रसेल पूर्णरूपेण बौद्धिक विचारक थे तथा तर्कशीलता से समझौता करना उन्हें मंजूर नहीं था। यदि उनके चिंतन में खुद उनके द्वारा कही गई बातों में विरोधाभास दिखा तो उन्होंने स्वयं उन बातों को नकार दिया। विशेष समस्याओं पर रसेल का मत भले ही भिन्न-भिन्न रहा हो, लेकिन उनका सोचने का ढंग एक जैसा रहा।

तार्किक संरचना *(Logical Construction)*

तार्किक संरचना (Logical Construction) का संबंध रसेल के तार्किक अणुवादी दर्शन से है। यह इस प्रश्न के उत्तर की खोज है कि साधारण भाषा में हम जिन वस्तुओं को सत् मानते हैं, उनकी वास्तविकता क्या है? रसेल का दावा है कि तात्त्विक रूप से सत्ता उन्हीं सरलतम अणुओं अर्थात् विशेषों (Particulars), गुणों (Qualities) तथा संबंधों (Relations) की मानी जा सकती है जिनका ज्ञान साक्षात् परिचयात्मक विधि (Knowledge through Acquaintance) से होता है। साक्षात् परिचयात्मक विधि से इंद्रियाँ प्रदत्तों (Sense Data), स्मृतियों (Memories), आत्म-चेतना (Self Consciousness) तथा कुछ सामान्य गुणों (Qualities) और संबंधों (Relations) का ज्ञान तो होता है किंतु जगत में साधारणत: स्वीकार की जाने वाली वस्तुओं का नहीं। रसेल इन वस्तुओं की व्याख्या तार्किक संरचना के रूप में करता है।

तार्किक संरचना की अवधारणा रसेल ने एक मेज के उदाहरण से स्पष्ट की है। जब हम मेज को देखते हैं तो वस्तुत: हमें कई इंद्रियाँ प्रदत्त (Sense Datum) प्राप्त होते हैं जैसे-हरा धब्बा, एक विशेष आकार आदि। उसे छूने पर एक और इंद्रियाँ प्रदत्त 'कठोरता' प्राप्त होती है। हमारा साक्षात् परिचयात्मक ज्ञान (Knowledge through Acquaintance) यहीं तक सीमित है। विभिन्न कालों में, प्रकाश की विभिन्न मात्राओं में, विभिन्न कोणों से और विभिन्न दूरियों से जब हम उसी मेज को बार-बार देखते हैं तो भिन्न-भिन्न इंद्रियाँ-प्रदत्त प्राप्त होते हैं। मेज कोई भौतिक वस्तु नहीं है, न ही वह इंद्रियाँ प्रदत्तों का कुल योग (Sum Total of Sense Data) है। वह तो विभिन्न प्रतीतियों की शृंखला (Chain of Appearances) द्वारा निर्मित तार्किक मन:सृष्टि या तार्किक कल्पना (Logical Fiction) है।

रसेल ने भौतिक वस्तुओं के साथ-साथ अन्य व्यक्तियों को भी तार्किक संरचना माना है। उदाहरण के लिये, यदि कोई राम नाम के व्यक्ति को जानता है तो विभिन्न प्रतीति शृंखलाओं के रूप में ही जानता है। अत: वह भी तार्किक संरचना मात्र है। तार्किक संरचनाओं की अभिव्यक्ति अपूर्ण प्रतीकों (Incomplete Symbols) के माध्यम से होती है जिसका संबंध वर्णनात्मक ज्ञान (Descriptive Knowledge) से है। रसेल ने वर्णन सिद्धांत में दिखाया है कि वाक्य में निहित तार्किक आकार (Logical Form) को स्पष्ट करके कैसे बिना अर्थ या सत्यता मूल्य (Truth Value) बदले इन्हें हटाया जा सकता है।

इस सिद्धांत में समस्या यह है कि अपने आत्म तत्त्व, मानसिक अनुभूतियों तथा कुछ इंद्रियाँ प्रदत्तों को छोड़कर यह जगत में किसी वस्तु को नहीं मानता। इसी पर बढ़ते-बढ़ते अंतत: रसेल को खुद ही मानना पड़ा कि यह सिद्धांत अपर्याप्त है।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

पूर्ववर्ती विट्गेंस्टीन *(Early Wittgenstein)*

पाश्चात्य दर्शन में 20वीं सदी के दार्शनिकों में से विट्गेंस्टीन निश्चित रूप से एक महान दार्शनिक माने जाते हैं। इनका बहुत कम साहित्य ही प्रकाशित हो सका। दर्शन में इनकी पुस्तक ट्रैक्टेटस (Tractatus) का स्थान महत्त्वपूर्ण है। रसेल तथा मूर जैसे विचारक विट्गेंस्टीन से प्रभावित थे। उनके शिष्यों ने यह दावा किया कि विट्गेंस्टीन जो लिख या बोल रहे थे, उसे वह जी भी रहे थे। 1908 में विट्गेंस्टीन मैनचेस्टर विश्वविद्यालय में एक शोध-छात्र के रूप में सक्रिय रहे, जहाँ उन्होंने एक वायुयान का ढाँचा विकसित किया। आगे चलकर उन्होंने रसेल के साथ अध्ययन किया। रसेल ने अपने लेखन में विट्गेंस्टीन से संबंधित घटनाओं का ज़िक्र किया है। रसेल ने लिखा है कि एक बार विट्गेंस्टीन ने आकर उनसे पूछा "मैं बेवकूफ हूँ या नहीं हूँ- "यदि मैं पूरा बेवकूफ हूँ तो वायुयान चालक बन जाऊँगा और नहीं हूँ तो चिंतन करूँगा। तब रसेल ने उनसे कहा कि तुम कुछ लिखकर लाओ। विट्गेंस्टीन ने रसेल को कुछ लिखकर दिया तो रसेल उससे इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने विट्गेंस्टीन को चिंतन करने की सलाह दी।

विट्गेंस्टीन ने काफी उतार-चढ़ाव वाला जीवन व्यतीत किया। कभी उन्हें लेखन के लिये पर्याप्त समय नहीं मिल पाया। वे कभी जेल में होते तो कभी सैनिक रूप में युद्ध लड़ रहे होते थे। विट्गेंस्टीन को हम दो खंडों में पढ़ते हैं- पूर्वकालीन विट्गेंस्टीन (Early Wittgenstein) तथा उत्तरकालीन विट्गेंस्टीन (Later Wittgenstien। पूर्वकालीन विट्गेंस्टीन दर्शन उसको माना जाता है जो 'ट्रैक्टेटस-लोजिको-फिलोसोफिकस (Tractatus Logico-Philosophicus) में वर्णित है और उत्तर विट्गेंस्टीन उसको माना जाता है जिसके मुख्य विचार फिलोसोफिकल इन्वेस्टीगेशन (Phiosophical Investigations) में संकलित है।

अर्थ का चित्र सिद्धांत *(Picture Theory of Meaning)*

अर्थ का चित्र सिद्धांत समकालीन दार्शनिक विट्गेंस्टीन का है। विट्गेंस्टीन ने अपनी पहली पुस्तक 'टैक्टेटस' में इस सिद्धांत को प्रस्तुत किया। टैक्टेटस का मूल विषय है–भाषा का स्वरूप तथा भाषा और जगत के संबंध का विश्लेषण। विट्गेंस्टीन का दावा है कि भाषा जगत के संबंध में जो कथन करती है, वह चित्र के रूप में होता है। किसी प्रतिज्ञप्ति (Proposition) के बोधगम्य होने का तात्पर्य ही है– भाषा में व्यक्त वस्तुस्थिति (State of Affairs) को देख लेना। यदि प्रतिज्ञप्ति वस्तुस्थिति का चित्रण न करे तो बोधगम्य नहीं होगी।

चित्र सिद्धांत की मूल समस्या यही दिखाना है कि भाषा किस प्रकार जगत का चित्र है? यहाँ चित्र का अर्थ न तो फोटोग्राफ है और न ही आइने का प्रतिबिंब। चित्र का अर्थ प्रतिरूपण (Representation) है। भाषा अपने चिह्नों, प्रतीकों या आकारों के आधार पर वस्तुस्थिति का प्रतिरूपण करती है। जिस प्रकार चित्र को देख कर हम जान लेते हैं कि चित्रित वस्तु कैसी है, वैसे ही भाषा के माध्यम से हम जगत को जान लेते हैं।

विट्गेंस्टीन के अनुसार जगत वस्तुओं की नहीं, तथ्यों की संपूर्णता (Totality of Facts) है। तथ्य (Fact) का अर्थ यह है कि जगत की वस्तुएँ या 'विशेष' किस प्रकार आपस में संबंधित हैं। जिस क्रम में वस्तुएँ परस्पर संयोजित हैं, वही तथ्य का आकार (Form) है। विट्गेंस्टीन का दावा है कि जगत में विद्यमान वस्तुओं को संपूर्णता में जान लेने से जगत की जानकारी नहीं मिलेगी, इसके लिये वस्तुओं में निहित संबंधों तथा क्रम को जानना होगा। इसी अर्थ में उसने जगत को तथ्यों की समग्रता कहा है।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

तार्किक परमाणुवाद/अणुवाद *(Logical Atomism)*

तार्किक अणुवाद रसेल व विट्गेंस्टीन का दर्शन है जिसका आरंभ करने का श्रेय रसेल को है। रसेल ने व्हाइटहेड के साथ 'प्रिंसिपिया मेथमेटिका' (Principia Mathematica) की रचना की थी जिसमें उसने सिद्ध किया कि संपूर्ण गणित का आधार तर्कशास्त्र (Logic) है। इस पुस्तक की सफलता से प्रेरित होकर उसने सोचा कि क्या इसी विधि से हम जगत की व्याख्या भी कर सकते हैं? जगत की व्याख्या करने के उद्देश्य से ही उसने तार्किक अणुवाद नामक दर्शन प्रस्तुत किया। यहाँ जगत की व्याख्या का अर्थ मात्र इतना है कि हम जगत के बारे में क्या जान सकते हैं, न कि यह कि जगत की वास्तविकता क्या है। यह दर्शन 1914 से 1919 तक प्रमुख रूप से प्रचलित रहा। इसका उद्देश्य उन तथ्यों की सूची बनाना है जिन्हें हम जगत के संबंध में जान सकते हैं। इसका तात्त्विक पक्ष अणुवाद (Atomism) है और तार्किक विश्लेषण (Logical Analysis) इसकी विधि है।

तार्किक अणुवाद के अनुसार उन्हीं वस्तुओं की सत्ता मानी जा सकती है जिन्हें भाषा के तार्किक विश्लेषण के माध्यम से जाना जा सके। तार्किक अणु वे हैं जिन्हें साक्षात् परिचयात्मक ज्ञान के द्वारा जाना जाता है। ये मूलत: तीन हैं-विशेष, गुण तथा संबंध। इनके अतिरिक्त अणु तथ्य वह चौथा सरलतम तत्त्व है जो तार्किक अणुवाद की तत्त्वमीमांसा में स्वीकृत है तथा जिसका निर्माण कम से कम एक विशेष और एक गुण या संबंध से होता है। ये तथ्य जगत के संबंध में सरलतम सूचनाएँ देते हैं तथा विशेष और सामान्य, भावात्मक और निषेधात्मक कई प्रकार के होते हैं। तात्त्विक पक्ष में रसेल और विट्गेंस्टीन यह भी दावा करते हैं कि सामान्य जीवन में जिन वस्तुओं और अन्य व्यक्तियों की सत्ता में विश्वास किया जाता है वे सिर्फ तार्किक संरचनाएँ हैं अर्थात् विभिन्न प्रतीतियों की शृंखलाओं से बनी तार्किक मन:सृष्टियाँ मात्र हैं।

तार्किक अणुवाद के दो पक्ष हैं: तार्किक (Logical) व तात्विक (Metaphysical)। तार्किक पक्ष का संबंध इसकी प्रविधि (Methodology) से है और तात्त्विक पक्ष (Metaphysical Aspect) का संबंध तत्त्वमीमांसीय निष्कर्षों से है। इस दर्शन को अणुवाद (Atomism) इसलिये कहते हैं क्योंकि अन्य अणुवादियों की तरह यह भी तत्त्वमीमांसा से संबंधित है तथा जगत की व्याख्या कुछ सरलतम (Simplest), अविभाज्य (Indivisible) तत्त्वों के आधार पर करता है। इसे तार्किक अणुवाद कहा गया है क्योंकि इसमें जिन अणुओं की खोज की गई है वे भौतिक (Material) या आध्यात्मिक (Spiritual) न होकर तार्किक (Logical) हैं; और जिस प्रक्रिया से खोज की गई है वह प्रक्रिया भी तार्किक है। यह तार्किक प्रक्रिया रसेल के गणितीय तर्कशास्त्र पर आधारित है जो भाषा के विश्लेषण के माध्यम से बढ़ती है।

इस प्रकार तार्किक अणुवाद के तार्किक पक्ष का संबंध भाषा के विश्लेषण से है और तात्विक पक्ष का संबंध उन तात्विक सत्ताओं (तार्किक अणुओं) की खोज से है जिनसे हमारा जगत संबंधी ज्ञान बनता है।

तात्विक पक्ष *(Metaphysical Aspect)*

रसेल के अनुसार तत्त्वमीमांसा में उसी सत्ता को स्वीकार किया जा सकता है जो तार्किक रूप से सरल (Logically Simple) हो। यहाँ तार्किक सरलता का अर्थ है जिसका ज्ञान साक्षात् परिचयमूलक विधि (Knowledge through Acquaintace) से होता हो, न कि वर्णनात्मक (Descriptive) विधि से। जिन्हें हम भौतिक वस्तुएँ कहते हैं, उन सबका ज्ञान वर्णनात्मक ज्ञान (Descriptive Knowledge)

Copyright– Drishti The Vision Foundation

तार्किक भाववाद/तार्किक प्रत्यक्षवाद *(Logical Positivism)*

तार्किक भाववाद या तार्किक प्रत्यक्षवाद (Logical Positivism) समकालीन दर्शन का एक संप्रदाय है जो विज्ञान का समर्थन करता है। इस संप्रदाय को यूरोप में 'तार्किक भाववाद' (Logical Positivism) कहा गया है, इंग्लैंड में 'तार्किक अनुभववाद' (Logical Empiricism) तो कुछ चिंतकों ने इसे 'वैज्ञानिक अनुभववाद' (Scientific Empiricism) भी कहा है। यह सिद्धांत 1920 के दशक में वियना सर्किल (Vienna Circle) से शुरू हुआ और 1950 के दशक में अंतिम रूप से समाप्त हो गया। इस संप्रदाय को प्रत्यक्षवाद (Positivism) इसलिये कहते हैं क्योंकि यह वैज्ञानिकों के अनुभववाद की तरह अनुभव को ज्ञान का अंतिम प्रमाण तथा प्रत्यक्ष जगत को अंतिम सत्ता मानता है। इनका अनुभववाद लॉक व बर्कले के समान मनोवैज्ञानिक (Psychological) नहीं बल्कि तार्किक (Logical) है। यहाँ तार्किकता का अर्थ अरस्तू की परंपरा के अनुसार नहीं, बल्कि उस अर्थ में है जिसमें रसेल ने तार्किक अणुवाद (Logical Atomism) के तार्किक पक्ष की व्याख्या की है। यह तार्किकता तार्किक विश्लेषण की विधि (Method of Logical Analysis) है और यह विश्लेषण भाषा का होता है। इस प्रकार तार्किक प्रत्यक्षवाद तार्किक विश्लेषण की प्रविधि और प्रत्यक्षवादी ज्ञानमीमांसा व तत्त्वमीमांसा (Positivistic Epistemology and Metaphysics) को मानने वाला दर्शन है।

तार्किक भाववाद के अनुसार दर्शन को पारंपरिक कार्यों से मुक्त करना आवश्यक है। इसके अनुसार दर्शन के दो कार्य हैं- निषेधात्मक (Negative) व भावात्मक (Positive)। निषेधात्मक (Negative) पक्ष के अंतर्गत दर्शन का कार्य तत्त्वमीमांसा का निरसन (Elimination of Metaphysics) करना है जबकि भावात्मक (Positive) पक्ष के अंतर्गत दर्शन का कार्य वैज्ञानिक भाषा के अर्थों का स्पष्टीकरण करना तथा उनमें निहित अनेकार्थकता (Ambiguity) तथा अर्थ-संशय जैसी स्थितियों को हटाना है।

तत्त्वमीमांसा का निरसन *(Elimination of Metaphysics)*

तत्त्वमीमांसा के खंडन के प्रयास दर्शन मे उतने ही प्राचीन हैं जितने प्राचीन उसकी स्थापना के प्रयास। ग्रीक दर्शन में जॉर्जियस और प्रोटेगोरस जैसे सोफिस्टों तथा पायरो जैसे संशयवादियों (Scepticists) ने; मध्ययुग में ओखम जैसे नामवादियों (Nominalists) ने; तथा आधुनिक युग में बेकन, हॉब्स और ह्यूम जैसे अनुभववादियों (Empiricists) ने तत्त्वमीमांसा के खंडन के पर्याप्त प्रयास किये। समीक्षावादी (Criticist) दार्शनिक कांट ने भी तत्त्वमीमांसा को ज्ञानातीत (Beyond Knowledge) तथा आस्था का विषय ही माना। इसके बाद भी तत्त्वमीमांसा के निरसन (Elimination of Metaphysics) का तार्किक भाववादियों द्वारा किया गया प्रयास एक विशेष अर्थ में मौलिक है। पहले के सभी प्रयास ज्ञानमीमांसीय (Epistemological) आधार पर हुए हैं अर्थात् तत्त्वमीमांसा का खंडन इसकी अज्ञेयता (Unknowability) के कारण किया गया है किंतु तार्किक भाववादियों ने पहली बार भाषा के आधार पर तत्त्वमीमांसा का विश्लेषण किया और सिद्ध किया कि तत्त्वमीमांसीय कथन वस्तुतः सार्थक (Meaningful) कथन होते ही नहीं हैं। इस अर्थ में 'ईश्वर है', 'ईश्वर नहीं है' तथा 'ईश्वर अज्ञेय है'-ये तीनों ही कथन निरर्थक (Meaningless) हैं।

तार्किक भाववादियों ने तत्त्वमीमांसा के निरसन के लिये दो प्रयास किये हैं:-

1. सत्यापन सिद्धांत (Theory of Verification) की प्रस्तुति;
2. तत्त्वमीमांसीय कथनों का भाषायी विश्लेषण (Linguistic Analysis) करके उनकी निरर्थकता को स्पष्ट करना।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

उत्तरवर्ती विट्गेंस्टीन *(Later Wittgenstein)*

जैसे कि हम जानते हैं कि विट्गेंस्टीन के दर्शन को दो खंडों में पढ़ा जाता है। भले ही 20वीं सदी में विट्गेंस्टीन के विचार दो खंडों में विभाजित रहे, किंतु दोनों ही दर्शन अपना महत्त्व रखते हैं। पूर्वकालीन विट्गेंस्टीन के दर्शन की जो आलोचना की गई, उसके आधार पर और समाधान रूप में उत्तरकालीन विट्गेंस्टीन स्तर का जन्म हुआ। दोनों स्तरों की केंद्रीय विषयवस्तु 'भाषा और दर्शन' ही रही। पूर्वकालीन और उत्तरकालीन, दोनों स्तरों पर विट्गेंस्टीन का दर्शन इसी प्रश्न पर मुख्यत: विचार करता है कि भाषा क्या कह सकती है?

ट्रैक्टेटस का खंडन *(Refutation of Tractatus)*

उत्तरकालीन विट्गेंस्टीन ने 'फिलासॉफिकल इन्वेस्टीगेशन' में स्वयं ट्रैक्टेटस के विचारों का विस्तारपूर्वक खंडन किया। ट्रैक्टेटस में उसने 'अर्थ का चित्र सिद्धांत' (Picture Theory of Meaning) प्रस्तुत किया था किंतु अब उसने 'अर्थ' (Meaning) के स्थान पर 'उपयोग' (Use) पर ध्यान दिया। इस नए दृष्टिकोण के कारण उसे स्वयं ट्रैक्टेटस के विचार निरर्थक प्रतीत हुए।

1. ट्रैक्टेटस में विट्गेंस्टीन की मान्यता थी कि भाषा का एक ही कार्य है-तथ्यों के विषय में बताना। इस मान्यता में निहित था कि भाषा का हर शब्द किसी वस्तु का निर्देश (Reference) करता है। इसे ही अर्थ का निर्देशात्मक सिद्धांत (Reference Theory of Meaning) कहते हैं। उत्तरकालीन विट्गेंस्टीन का विचार है कि यह धारणा भ्रांतिपूर्ण है। यदि हम निर्देशात्मक सिद्धांत को लेकर चलेंगे तो हमारी भाषा सिर्फ संज्ञा शब्दों (Nouns) पर केंद्रित हो जाएगी जबकि भाषा में विशेषण (Adjectives), संबंध (Relations) और क्रिया (Verb) को सूचित करने वाले शब्द भी होते हैं। पुन: भाषा सिर्फ निर्देशात्मक कार्य नहीं करती। हर वाक्य अनंत प्रकार के कार्य कर सकता है जैसे आज्ञा देना, इच्छा व्यक्त करना, गाली देना, आशीर्वाद देना, धन्यवाद देना आदि।
2. ट्रैक्टेटस की मान्यता थी कि भाषा की सार्थकता सिर्फ चित्रण के स्तर पर होती है। अत: सार्थक भाषा वही है जो वस्तु-स्थिति (State of Affairs) का चित्रण करने में समर्थ है। उत्तरकालीन विट्गेंस्टीन का तर्क है कि भाषा के कई कार्यों में से एक वस्तु-स्थिति को सूचित करना है, किंतु उसे एकमात्र कार्य नहीं माना जा सकता। कई वाक्यों से चित्र नहीं उभरता किंतु तब भी वे संदर्भ के अनुसार सार्थक होते हैं। वस्तुत: भाषा के शब्द व वाक्य औजारों के बक्से (Tool Box) में भरे कई औजारों के समान हैं। यह तो सही है कि कोई औजार सारे काम नहीं कर सकता किंतु यह भी सही है कि हर औजार कई तरह के काम कर सकता है। जैसे, हथौड़ा ठोकने का काम तो कर ही सकता है किंतु उड़ते हुए कागजों को दबाने के लिये 'पेपरवेट' और किसी को चोट पहुँचाने के लिये 'हथियार' भी बन सकता है। यही स्थिति भाषा की भी है। वह चित्रण तो करती ही है किंतु अन्य कई कार्य भी कर सकती है।
3. ट्रैक्टेटस की मान्यता थी कि भाषा पूर्णत: स्पष्ट, वस्तुनिष्ठ (Objective) व नियमनिष्ठ संरचना है। कम से कम एक ऐसी आदर्श भाषा के बारे में सोचा जा सकता है जो निश्चित (Certain) व सार्वभौम (Universal) हो तथा मानवीय आत्मनिष्ठता (Human Subjectivity) से पूर्णत: मुक्त हो। यह भाषा प्राथमिक प्रतिज्ञप्तियों (Elementary Propositions) तथा उनके सत्यता फलनों (Truth Functions) से निर्मित होती है। उत्तरकालीन विट्गेंस्टीन ने इस विचार का भी खंडन किया। उसके अनुसार जो लोग आदर्श भाषा की बात करते हैं, वे मानकर चलते हैं कि तर्कशास्त्र (Logic) के नियमों पर आधारित

Copyright– Drishti The Vision Foundation

संवृत्तिशास्त्र; हुसर्ल *(Phenomenology; Husserl)*

संवृत्तिशास्त्र (Phenomenology) प्रसिद्ध समकालीन दार्शनिक हुस्सर्ल का दर्शन है। पश्चिमी दर्शन में संवृत्तिवाद (Phenomenalism) की चर्चा अक्सर होती रही किंतु हुस्सर्ल के अनुसार संवृत्तिशास्त्र (Phenomenology), संवृत्तिवाद (Phenomenalism) नहीं है। संवृत्तिवाद (Phenomenalism) वह दर्शन है जिसके अनुसार प्रत्यक्ष से प्राप्त प्रतीतियाँ (Appearances) ही ज्ञेय हैं, वास्तविक वस्तुएँ नहीं। इस विचार को लॉक, बर्कले, ह्यूम, कांट व रसेल आदि दार्शनिकों ने स्वीकार किया है। संवृत्तिशास्त्र (Phenomenology) शब्द का प्रयोग भी हुस्सर्ल से पहले लेम्बर्ट, कांट व हीगेल कर चुके थे किंतु उन्होंने इस शब्द का प्रयोग कुछ अन्य अर्थों में किया। हुस्सर्ल ने संवृत्तिशास्त्र शब्द का प्रयोग एक निश्चित प्रविधि के रूप में किया और इसे परिभाषित करते हुए कहा कि यह एक ऐसी प्रविधि (Methodology) है जो सभी पूर्वमान्यताओं (Pre-assumptions) और पूर्वाग्रहों (Prejudices) से रहित होकर केवल 'विषयापेक्षी चेतना' (Intentional Consciousness) में उपलब्ध 'आद्य प्रतीति' या 'शुद्ध संवृत्ति-भाव' (Pure Phenomenon) की खोज करती है।

हुस्सर्ल के अनुसार अभी तक के दर्शन की मूल समस्या यह है कि दार्शनिकों ने चिंतन तो किया है किंतु चिंतन की विधि सुनिश्चित नहीं हो पाई है जबकि चिंतन करने के पूर्व निश्चित विधि का होना आवश्यक है। एक ऐसी विधि होनी चाहिये जो किसी भी प्रकार की पूर्वमान्यता (Pre-assumption) से रहित हो। पहले के दार्शनिक पूर्वमान्यताओं से ग्रस्त रहे। अनुभववादी मानते रहे कि इन्द्रिय संवेदन (Sensation) वस्तुनिष्ठ रूप में सत्य होता है, बुद्धिवादी बुद्धि की अनंत शक्ति और जन्मजात प्रत्ययों (Innate Ideas) को, कांट वैज्ञानिक ज्ञान की संभाव्यता को और हीगेल द्वंद्वात्मक विधि (Dialectic Method) को पूर्वमान्यता के रूप में लेकर चलते रहे। डेकार्ट अकेला दार्शनिक है जिसने अपनी संशय विधि (Method of Doubt) में पूर्वमान्यताओं से बचने का प्रयास किया, किंतु न तो वह अपनी प्रविधि का महत्त्व समझ सका और न ही अपने मन से आत्मा और जड़ पदार्थ की सत्ता के विश्वास को सचमुच हटा सका। अतः हुस्सर्ल के अनुसार सत्य की खोज से पहले आवश्यक है सत्य की खोज के लिये प्रविधि की खोज। उसके अनुसार, संवृत्तिशास्त्र मूलतः एक प्रविधि ही है। यद्यपि उससे कुछ तत्त्वमीमांसीय निष्कर्ष स्वतः ही निकल आते हैं।

संवृत्तिशास्त्रीय विधि *(Phenomenological Method)*

हुस्सर्ल ने संवृत्तिशास्त्रीय विधि के दो चरण बताए हैं- निषेधात्मक (Negative) व भावात्मक (Positive)। निषेधात्मक (Negative) चरण में वह दो प्रकार के दृष्टिकोणों का खंडन करता है, जिन्हें मनोवैज्ञानिकता (Psychologism) व प्रकृतिवाद (Naturalism) कहते हैं। इसके उपरांत, भावात्मक (Positive) पक्ष में वह दो पद्धतियाँ स्पष्ट करता है जिन्हें क्रमशः कोष्ठकीकरण (Epoche/Bracketing) तथा अपचयन (Reductions) कहा गया है।

मनोवैज्ञानिकता (Psychologism) वह दृष्टिकोण है जिसके अंतर्गत हम मनोवैज्ञानिक तथ्यों को स्वीकार करते हैं और न केवल मनोविज्ञान बल्कि गणित व विज्ञान की व्याख्या भी उन्हीं के माध्यम से करने लगते हैं किंतु हुस्सर्ल के अनुसार यह धारणा गलत है। मनोविज्ञान यह भूल जाता है कि उसमें वस्तुनिष्ठता (Objectivity) नहीं आ सकती क्योंकि मनोविज्ञान के नियम अनुभवों के सामान्यीकरण (Generalisation) मात्र हैं। मिल ने मनोवैज्ञानिक आधार पर गणित की व्याख्या करने का प्रयास किया किंतु वह गणित में अनिवार्यता नहीं ला सका।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

अस्तित्त्ववाद *(Existentialism)*

अस्तित्त्ववाद कोई वाद नहीं है, बल्कि एक दृष्टि है या नज़रिया है, परंतु इस प्रकार का वर्गीकरण अस्तित्त्ववादियों के लिये करना आसान नहीं है, क्योंकि वे सभी अपने-अपने दर्शन में स्वतंत्र चिंतक हैं। हर एक विचारक का विचार दूसरे विचारक के मत से भिन्न है।

अस्तित्त्ववाद की आलोचना भी की गई है। आलोचकों ने कहा कि अस्तित्त्ववादी विचारकों ने भिन्न-भिन्न मत देकर इसका स्वरूप ही अस्पष्ट कर दिया।

परिचय

अस्तित्त्ववाद 19वीं तथा 20वीं शताब्दी का दर्शन है। कुछ विद्वान इसके बीज ग्रीक दर्शन या पारंपरिक दर्शन में खोजते हैं, पर ऐसे प्रयास 'विद्वता के खेल' मात्र हैं। वस्तुत: अस्तित्त्ववाद 19वीं-20वीं सदी का मानव-स्थितियों (Human-Conditions) से अनिवार्यत: जुड़ा हुआ दर्शन है। यह कुछ विशेष कारणों से अन्य दर्शनों से भिन्न है-

(क) यह 'वाद' (Ideology) नहीं, 'दृष्टि' (Point of view) है। अस्तित्त्ववाद के सभी समर्थक 'स्वतंत्र' (Independent) चिंतन करते हैं। उनका दृष्टिकोण आपस में मिलता-जुलता है, इसलिये उन्हें एक वर्ग में रखा जाता है। 'वाद' (Ideology) और 'दृष्टि' (Point of View) में अंतर है। वाद (Ideology) खंडित हो सकता है जबकि दृष्टि (Point of View) खंडित नहीं हो सकती। वह उपयुक्त (Appropriate) या अनुपयुक्त (Inappropriate) हो सकती है किंतु खंडित नहीं हो सकती।

(ख) अस्तित्त्ववाद 'जीवन' से जुड़ा हुआ दर्शन है, न कि भाषा (Language) या प्रतिज्ञप्तियों (Propositions) के विश्लेषण (Analysis) से। ये दार्शनिक 20वीं शताब्दी के आरंभिक समय में मनुष्य की नियति की व्याख्या करना चाहते हैं। इनका मानना है कि बुद्धिवादी (Rationalist) और प्रत्ययवादी (Idealist) दर्शनों, विज्ञान के सार्वभौमतावादी (Universalistic) स्वरूप, तकनीकीकरण, नगरीकरण (Urbanisation), विशेषीकरण (Specialisation) तथा विश्वयुद्धों ने मानव को उसकी मानवता से वंचित कर दिया है। मनुष्य अमानवीकृत (Dehumanised) हो गया है। यह दर्शन इस अमानवीकरण (Dehumanisation) के विरुद्ध एक वैचारिक प्रतिक्रिया है।

(ग) अस्तित्त्ववाद प्रेक्षक (Spectator) नहीं, कर्त्ता (Actor) की दृष्टि से दिया गया विचार है। अत: इसके केंद्र में 'दिखने वाला' नहीं, 'जीने वाला' मनुष्य है।

अस्तित्त्ववाद का निषेधात्मक पक्ष *(Negative Aspect of Existentialism)*

सभी अस्तित्त्ववादियों ने उन विचारों का खंडन किया है जो मनुष्य के मानव-तत्त्व (Human-ness) या उसकी आंतरिकता (Subjectivity) के विरुद्ध हैं। यह विरोध मुख्यत: निम्नलिखित विचारधाराओं (Ideologies) से है-

(क) हीगेल आदि का बुद्धिवादी (Rationalist) दर्शन जो बुद्धि पर अत्यधिक बल देता है किंतु भूल जाता है कि मनुष्य की चेतना में भावनाओं (Emotions) व संकल्प (Will) के तत्त्व भी होते हैं व व्यक्ति की अपनी दृष्टि में इन्हीं का महत्त्व अधिक होता है।

(ख) वे सभी स्वप्नदर्शी तत्त्वमीमांसाएँ (Speculative Metaphysics) जो मनुष्य के जीवन पर विचार करने के स्थान पर अमूर्त (Abstract) व काल्पनिक (Imaginative) धारणाओं में खोई रहती हैं। हीगेल आदि का दर्शन तत्त्वमीमांसा की कोटियों का अंबार खड़ा कर देता है किंतु सत्य के नज़दीक नहीं पहुँचता।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

क्वाइन *(Quine)*

क्वाइन अनुभवजन्य-विज्ञान पर चिंतन करने वाले दार्शनिक हैं। विज्ञान में अत्यधिक रुचि के कारण उनके दर्शन को अच्छा नहीं बताया गया बल्कि उनके द्वारा प्रतिपादित अनुभवजन्य सिद्धांत तथा विज्ञान का अंत:संबंध है। क्वाइन इस बात की वकालत करता है कि तीव्र भावनाओं के आधार पर कैसे अनुभववादी विज्ञान को विकसित किया, इसमें तार्किक तत्त्वों की उपयोगिता पर भी बल प्रदान करते हैं। कुल मिलाकर क्वाइन दर्शन को प्राकृतिक विज्ञान की अवधारणा का अवलोकन प्रदान करता है।

आमूल/उत्कट अनुभववाद *(Radical Empiricism)*

क्वाइन समकालीन दर्शन का प्रमुख दार्शनिक है जिसे 'आमूल अनुभववादी' (Radical Empiricist) कहा जाता है। आमूल अनुभववाद का अर्थ है कि वह अपनी अनुभववादी मान्यताओं में शेष अनुभववादियों से अधिक उग्र है। वह अनुभववादी इसलिये माना जाता है क्योंकि उसने अनुभववाद के दो मूलभूत सिद्धांतों को स्वीकार किया है-

1. सत्ता (Existence) या विज्ञान (Science) से संबंधित किसी भी सिद्धांत की व्याख्या या परीक्षा अनुभव के आधार पर ही हो सकती है।
2. भाषा और अर्थ (Language and Meaning) की व्याख्या भी आनुभविक आधार पर ही की जा सकती है।

अनुभववाद की इन मूल कसौटियों को मानने के बावजूद वह अनुभववाद की कुछ पारंपरिक मान्यताओं का खंडन करता है क्योंकि उसके अनुसार वे मान्यताएँ अनुभववाद पर थोपी हुई हैं, वास्तविक रूप से अनुभववाद से सुसंगत नहीं हैं। ऐसी मान्यताओं का खंडन उसने मुख्यत: "From a Logical Point of View" में संकलित निबंध "Two Dogmas of Empiricism" में किया है। इस निबंध में उसने विश्लेषी-संश्लेषी भेद (Analytic-Synthetic Distinction) तथा रूपांतरणवाद को अनुभववाद के दो मताग्रह (Dogmas) बताकर खंडित किया। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य पुस्तकों जैसे "World & Object", "On what is there", "Epistemology Neutralized" में भी उसने अनुभववाद की कुछ विसंगतियों पर चोट की है।

इन दोनों मताग्रहों के अतिरिक्त अनुभववाद की कुछ और मान्यताओं का खंडन क्वाइन ने किया है जो इस प्रकार हैं-

1. पारंपरिक अनुभववादियों जैसे लॉक, बर्कले, ह्यूम और समकालीन तार्किक अनुभववादियों ने माना है कि हमें अनुभव वस्तुओं का नहीं, इन्द्रिय संवेदनों (Sensations) का होता है जिन्हें किसी ने प्रत्यय (Idea), तो किसी ने संस्कार (Impression) या इन्द्रिय प्रदत्त (Sense Datum) कहा है। क्वाइन ने अपनी पुस्तक " World & object" में दिखाया कि हमारे चिंतन का आधार ''मध्यम आकार की स्थूल वस्तुएँ'' (Objects of Middle Range) ही हो सकती हैं क्योंकि बहुत छोटी वस्तु का संवेदन नहीं होगा और बहुत बड़ी से तादात्म्य नहीं होगा। उसके अनुसार हमारे चिंतन का आरंभ वस्तुसूचक भाषा (Object-Language) में ही होता है, संवेदनसूचक भाषा (Sensation-Language) में नहीं।
2. अनुभववादियों ने प्राय: तत्त्वमीमांसा को ज्ञानात्मक (Cognitive) या भाषायी (Linguistic) आधार पर असिद्ध करने का प्रयास किया है। उदाहरण के लिये, ह्यूम के अनुसार तत्त्वमीमांसीय विषयों का निश्चयात्मक ज्ञान नहीं हो सकता जबकि तार्किक भाववादियों के अनुसार तत्त्वमीमांसीय कथन निरर्थक होते हैं। इसके विपरीत क्वाइन का दावा है कि वस्तुत: विज्ञान और तत्त्वमीमांसा के कथनों में अंतर सिर्फ व्यापकता का है। विज्ञान के कथनों की तुलना में तत्त्वमीमांसीय कथन अधिक व्यापक होते हैं।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

स्ट्रासन *(Strawson)*

स्ट्रॉसन समकालीन दर्शन का प्रमुख दार्शनिक है जिसका दर्शन साधारण भाषा दर्शन (Ordinary Language Philosophy) से संबद्ध है। हालाँकि राइल और ऑस्टिन की तरह वह भाषा-विश्लेषण दर्शन का पूर्ण प्रतिनिधि नहीं है। स्ट्रॉसन ने माना कि भाषा का विश्लेषण महत्त्वपूर्ण है किंतु वह अपने आप में पर्याप्त नहीं है। इसी मत के अनुरूप उसने एक विशेष प्रकार की तत्त्वमीमांसा (Metaphysics) स्थापित की जिसे उसने विवरणात्मक तत्त्वमीमांसा (Descriptive Metaphysics) कहा।

विवरणात्मक तत्त्वमीमांसा *(Descriptive Metaphysics)*

स्ट्रॉसन के अनुसार तत्त्वमीमांसा दो प्रकार की होती है-परिशोधनात्मक/संशोधनात्मक (Revisionary) तथा विवरणात्मक (Descriptive)। परिशोधनात्मक तत्त्वमीमांसा (Revisionary Metaphysics) अपने जगत से असंतुष्ट होकर एक उच्चतर काल्पनिक जगत की सृष्टि करती है। यह इतनी प्रभावशाली होती है कि मन को छू लेती है। इसके प्रतिनिधियों में डेकार्ट, लाइबनिज़ और बर्कले आदि प्रमुख हैं। इसके विपरीत विवरणात्मक तत्त्वमीमांसा (Descriptive Metaphysics) जगत संबंधी हमारे विचार का विवरण मात्र है। यह मात्र जिज्ञासा की तृप्ति है, कल्पना का प्रयोग नहीं। इसके प्रतिनिधियों में अरस्तू व कांट को मुख्य रूप से शामिल कर सकते हैं। स्ट्रॉसन ने स्पष्ट किया है कि प्रत्येक दार्शनिक को निश्चित रूप से किसी एक वर्ग में नहीं रखा जा सकता। उदाहरण के तौर पर वह कहता है कि मूर को दोनों ही प्रकारों में स्थान दिया जा सकता है।

प्रश्न है कि यदि विवरणात्मक तत्त्वमीमांसा (Descriptive Metaphysics) अपने जगत का विवरण मात्र करती है तो इसमें और वैचारिक विश्लेषण (Analysis) में क्या अंतर है? स्ट्रॉसन के अनुसार वैचारिक विश्लेषण में एक तरह की तदर्थता (Ad-hocism) होती है अर्थात् जैसे-जैसे समस्या आती है, उसका विश्लेषण किया जाता है। इसके विपरीत विवरणात्मक तत्त्वमीमांसा हमारे जगत संबंधी विचारों की सामान्य व सार्वभौमिक (Universal) विशेषताओं का विश्लेषण है।

एक प्रश्न यह भी उठता है कि यदि विवरणात्मक तत्त्वमीमांसा (Descriptive Metaphysics) हमारे विचारों के सामान्य पक्षों से संबंधित है तो क्या इसमें कुछ नयापन है? स्ट्रॉसन ने खुद माना है कि हमारी संपूर्ण वैचारिकता की तह में कुछ मूल कोटियाँ (Fundamental Categories) विद्यमान हैं जो हमारे सभी विचारों को परिभाषित करती हैं किंतु जिन पर स्वतंत्र विचार ज्यादा नहीं हुआ है। इसलिये ये विषय तो नए नहीं हैं किंतु इनकी अभिव्यक्ति प्रणालियाँ समय के साथ-साथ बदलती रहीं, अपने समय के भाषिक मुहावरे में व्यक्त होती रहीं। कहा जाता है कि ये ''शाश्वत संबंधों के अस्थाई विवरण'' (Temporary Descriptions of Permanent Relations) हैं।

स्ट्रॉसन ने वर्णनात्मक तत्त्वमीमांसा (Descriptive Metaphysics) को अपनी पुस्तक 'Individuals' में प्रस्तुत किया है। इसमें दो ऐसी मूल कोटियाँ (Fundamental Categories) खोजी गई हैं जो संपूर्ण वैचारिकता की तह में विद्यमान रही हैं। ये हैं-भौतिक वस्तु (Material Bodies) और व्यक्ति (Person)। स्ट्रॉसन ने भौतिक वस्तुओं (Material Bodies) को मूल विशेष (Basic Particular) माना है और व्यक्ति (Person) की धारणा को आद्य (Primitive) माना है। उसने इन्हीं दोनों तत्त्वमीमांसीय विचारों को 'Individuals' में प्रस्तुत किया है।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

पाश्चात्य दर्शन में जगत संबंधी विचार
(Concept of World in Western Philosophy)

ग्रीक दर्शन के समय से ही जगत की व्याख्या के प्रयास होते रहे हैं। शुरुआती ग्रीक दर्शन में जगत को सामान्यत: वास्तविक (Real) माना गया और एक मूल कारण के आधार पर उसकी व्याख्या का प्रयास किया गया; जैसे थेल्स ने जल से, एनेग्ज़ीमेनीज़ ने वायु से तथा हेराक्लाइटस ने अग्नि से जगत की उत्पत्ति निर्धारित की। कुछ आगे चलकर ग्रीक परमाणुवादी (Atomist) दार्शनिकों डिमोक्रेट्स एवं ल्यूसियस ने जगत की यांत्रिकवादी (Mechanistic) व भौतिकवादी (Materialistic) व्याख्या करते हुए उसे गतिशील, नित्य व भौतिक परमाणुओं से निर्मित माना। सामान्यत: प्लेटो के आगमन के पूर्व जगत के संबंध में ऐसी ही धारणाएँ दिखाई पड़ती हैं।

प्लेटो ने जगत की व्याख्या भिन्न प्रकार से की जिस पर कुछ मात्रा में पार्मेनाइडीज़ का प्रभाव है। उसने प्रत्ययों को सत् (Real) माना और जड़ पदार्थ को असत् (Unreal)। जगत प्रत्ययों और जड़ पदार्थ के मिथुनीकरण से बना है अर्थात् सत्-असत् का मिश्रण है। जब असत् रूपी जड़ पदार्थ पर सत् प्रत्ययों की छाप पड़ती है तो जगत की वस्तुएँ अनुभव का विषय बनने लगती हैं।

अरस्तू ने प्लेटो की तुलना में जगत को अधिक महत्त्व दिया, क्योंकि उसकी रुचि परिकल्पनात्मक तत्त्वमीमांसा (Speculative Metaphysics) में नहीं, वर्णनात्मक तत्त्वमीमांसा (Descriptive Metaphysics) में थी। उसने जगत को मैटर तथा फॉर्म के मिश्रण के रूप में परिभाषित किया और स्पष्ट किया कि जगत की हर वस्तु में उसका सामान्य शामिल होता है, वह जगत से परे किसी कल्पना लोक में नहीं रहता।

अरस्तू के बाद दो यहूदी दार्शनिकों **प्लॉटिनस** और **फाइलो** ने जगत की व्याख्या भिन्न प्रकार से की। प्लॉटिनस ने पहली बार रहस्यवादी अर्थ में जगत की व्याख्या करते हुए जगत को ईश्वर की अभिव्यक्ति बताया। **फाइलो** ने पहली बार 'शून्य' (Ex-Nihilio) का विचार दिया जिसके अनुसार ईश्वर ही जगत का एकमात्र कारण है किंतु जगत निर्माण की प्रक्रिया में उसकी पूर्णता न बढ़ती है, न ही घटती है। आगे चलकर यही विचार इसाई तथा ईस्लाम धर्मों ने भी स्वीकार कर लिया।

मध्यकालीन दर्शन में जगत का महत्त्व कम रहा क्योंकि कैथोलिक धर्म बाइबिल के 'जेनिसिस' (Genesis) नामक अध्याय की व्याख्या के आधार पर जगत को कारागार की तरह देखता रहा। यह व्याख्या मानती है कि एडम और ईव स्वर्ग के उद्यान में थे किंतु 'आदिम पाप' (Original Sin) के कारण ईश्वर ने उन्हें दंड स्वरूप जगत पर भेजा है। मध्यकालीन दर्शन में जगत को प्राय: इसी रूप में देखा गया तथा इससे मुक्त होकर पुन: स्वर्ग की प्राप्ति के उपायों पर बल दिया जाता रहा।

संक्रमण काल तक आते-आते विज्ञान के विकास से जगत का महत्त्व बढ़ने लगा। **बेकन** ने जगत के अध्ययन पर बल दिया तो **थॉमस हॉब्स** ने किसी भी पारलौकिक सत्ता को खारिज करते हुए सिर्फ इसी जगत को वास्तविक माना। **गैलीलियो** एवं **कॉपरनिकस** के अनुसंधानों ने जगत की प्रतिष्ठा बढ़ाई। **ब्रूनो** ने जगत व ईश्वर में अभेद स्थापित करके जगत को अत्यधिक महत्त्व प्रदान किया।

आधुनिक दर्शन में जगत संबंधी धारणा प्रत्येक दार्शनिक के अनुसार बदलती रही है। **डेकार्ट** ने संशय विधि (Method of Doubt) के अंतर्गत जगत सहित प्रत्येक धारणा पर संशय किया किंतु अंतत: उसने जड़ पदार्थ और आत्मा की सत्ता को स्वीकार कर लिया। उसने आत्मा व जड़ पदार्थ में आत्यंतिक विभेद किया

Copyright– Drishti The Vision Foundation